वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय
कोटा

एम.जे.एम.सी. -6
दृश्य-श्रव्य जनसंचार प्रविधि
(Audio-Visual Communication Technology)

दृश्य–श्रव्य जनसंचार प्रविधि- 6

पत्रकारिता एवं जनसंचार स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम
(Master of Journalism & Mass Communication)

दृश्य–श्रव्य जनसंचार प्रविधि

टेलीविजन निर्देशन
टेलीविजन आलेख

6

पत्रकारिता एवं जनसंचार
स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम

दृश्य–श्रव्य जनसंचार प्रविधि–6

पाठ्यक्रम विशेषज्ञ समिति

* **प्रो. जी.एस.एल. देवड़ा**
  कुलपति
  कोटा खुला विश्वविद्यालय
  कोटा
  (अध्यक्ष समिति)
* **प्रो. ए.के. बनर्जी**
  पूर्व-अध्यक्ष
  पत्रकारिता विभाग
  बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय
  वाराणसी
* **डॉ. अब्दुल वहीद खान**
  निदेशक (विकास एवं प्रशिक्षण)
  कॉमनवेल्थ सेण्टर ऑफ लर्निंग
  वैंकूवर (कनाडा)
* **प्रो. जे.एस. यादव**
  भारतीय जनसंचार संस्थान
  नई दिल्ली
* **राधेश्याम शर्मा**
  पूर्व-महानिदेशक
  माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता
  विश्वविद्यालय, भोपाल(म. प्र.)
* **डॉ. भंवर सुराणा**
  ब्यूरो चीफ/ विशेष संवाददाता
  दैनिक हिंदुस्तान
  जयपुर
* **डॉ. ओ.पी. केजरीवाल**
  निदेशक, नेहरू मेमोरियल म्यूजियम एण्ड लाइब्रेरी
  तीन मूर्ति भवन, नई दिल्ली
* **डॉ. रमेश जैन**
  अध्यक्ष-जनसंचार विभाग
  कोटा खुला विश्वविद्यालय, कोटा
  (सचिव, समिति)

संयोजक

डॉ. रमेश जैन- अध्यक्ष, जनसंचार विभाग
कोटा खुला विश्वविद्यालय, कोटा

पाठ-संपादक एवं भाषा-संपादक

पाठ-संपादक
डॉ. रमेश जैन
अध्यक्ष, जनसंचार विभाग
कोटा खुला विश्वविद्यालय, कोटा

भाषा-संपादक
डॉ. विष्णु पंकज
वरिष्ठ साहित्यकार-पत्रकार
जयपुर

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रोफेसर (डॉ.) नरेश दाधीच	**प्रोफेसर (डॉ.) अनाम जेटली**	**योगेन्द्र गोयल**
कुलपति	निदेशक	प्रभारी
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)	**संकाय विभाग**	**पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग**

पाठ्यक्रम उत्पादन

योगेन्द्र गोयल
सहायक उत्पादन अधिकारी,
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)

पुनः उत्पादन - सितम्बर, 2009

सर्वाधिकार सुरक्षित : इस पाठ्यक्रम सामग्री का कोई भी अंश कोटा खुला विश्वविद्यालय/ वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा की लिखित अनुमति प्राप्त किए बिना या निम्योग्राफी (चक्रमुद्र) अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करना वर्जित है ।

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों के विषय में और अधिक जानकारी विश्वविद्यालय के कुलसचिव, वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, रावतभाता रोड, कोटा से प्राप्त की जा सकती हैं।

कुलसचिव, वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा द्वारा प्रकाशित

पाठ लेखक

1. **गोपाल सक्सेना**
   मीडिया सलाहकार, नोएडा
   पूर्व निदेशक, सेन्ट्रल प्रोडक्शन सेंटर (सी.पी.सी.)
   दूरदर्शन, नई दिल्ली

2. **गोपाल गुप्ता**
   वरिष्ठ जनसंचारकर्मी
   नई दिल्ली

3. **शैलेन्द्र मोहन कुमार**
   सूचना अधिकारी
   नई दिल्ली

4. **सुभाष सोतिया**
   संपादक-आजकल
   नई दिल्ली

5. **प्रो. प्रदीप माथुर**
   भारतीय जनसंचार संस्थान
   अरुणा आसफल अली मार्ग, जे.एन.यू.
   न्यू कैम्पस, नई दिल्ली

6. **श्याम माथुर**
   राजस्थान पत्रिका, जयपुर

7. **जी.सी. गर्ग**
   पूर्व-स्टेशन इन्जीनियर
   दूरदर्शन, जयपुर

8. **टीकम ठाकुर**
   सहायक अभियन्ता
   दूरदर्शन केन्द्र, जयपुर

9. **महेश पालीवाल**
   सहायक इन्जीनियर
   दूरदर्शन केन्द्र, जयपुर

10. **सत्यकाम**
    रीडर-हिन्दी विभाग
    इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय

11. **मुरली मनोहर मंजुल**
    वरिष्ठ जनसंचारकर्मी
    जोधपुर

12. **जगमोहन माथुर**
    वरिष्ठ पत्रकार एवं लेखक
    नई दिल्ली

13. **राधेश्याम तिवारी**
    वरिष्ठ जनसंचारकर्मी
    जयपुर

14. **शांति प्रसाद अग्रवाल**
    मीडिया सलाहकार एवं
    वरिष्ठ जनसंचारकर्मी
    गाजियाबाद

15. **रामकुमार**
    वरिष्ठ जनसंचारकर्मी
    कोटा

अनुवाद

रामकुमार
वरिष्ठ जनसंचारकर्मी
कोटा

एम. जे. एम. सी. -6

दृश्य-श्रव्य जनसंचार प्रविधि

पाठ्यक्रम - षष्ठ
खण्ड- 1

6

दृश्य-श्रव्य जनसंचार प्रविधि

इकाई - 24	
टेलीविज़न निर्देशन	9–21
इकाई - 25	
टेलीविज़न आलेख	22–35
इकाई - 26	
टेलीविज़न धारावाहिक लेखन	36–53

खंड एवं इकाई परिचय

खंड परिचय

पत्रकरिता एवं जनसंचार स्नातकोर पाठ्यक्रम 6 के 'दृश्य –श्रव्य जनसंचार प्रविधि खंड 6 का आप अध्ययन रहे है। यह खंड टेलीविजन निर्देशन, टेलीविजन आलेख, एवं, टी.वी धारावाहिक लेखन की ईकाइयों का है।

आज टेलिविजन जनसंचार का एक महत्वपूर्ण एवं सशक्त माध्यम है। टेलीविजन के कार्यक्रम निर्माण में रोजगार अपार संभावनाए है। अत: इसके लिए आवश्यक है कि आपको टेलीविजन निर्देशन टेलीविज़न के लिए आलेख-लेखन व टी.वी. धारावाहिक कैसे लिखे जाते है? आदि के बारे में जानकारी दी जाए।

इस खंड में तीन इकाइयां है। 1. टेलीविजन निर्देशन , 2 टेलीविज़न आलेख एवं 3 टेलीविज़न धारावाहिक लेख:

इकाई परिचय

इकाई 24 'टेलीविजन निर्देशन कि है। किसी भी टेलीविज़न कार्यक्रम में निर्देशक कि महत्वपूर्ण भूमिका होती है निर्देशन के अभाव में किसी भी टेलीविजन धारावाहिक कि कल्पना नहीं कि जा सकती है। टेलीविज़न कार्यक्रम कि सफलता या असफलता निर्देशक पर भी निर्भर है। अच्छा निर्देशक चाहे तो कार्यक्रम कि गरिमा में चार चंद लगा सकता है।

प्रस्तुत इकाई में टेलीविज़न कार्यक्रम निर्माता और निर्देशक एवं छायाकार, निर्देशक एवं कलाकार, निर्देशक एवं संपदक, निर्देशक एवं तकनीकी निर्देशक, निर्देशकीय शेली के तत्व-कथावस्तु कि पकड़ दृश्यात्मकत, गत्यात्मकता, अभिनय एवं संगीत और ध्वनि आदि पहलुयो कि विवेचना कि गई है।

इकाई 25 टेलीविज़न आलेख में सबद्ध है। टेलीविज़न के लिए आलेख (स्क्रिप्ट) लिखना कला है। सभी लेखक टेलीविज़न के लिए आलेख नहीं लिख सकते। टेलीविज़न आलेख एवं रेडियो आलेख में बहुत अंतर है, दोनों कि लेखन शेली भिन्न है।

टेलीविज़न के लिए अच्छा आलेख या पटकथा उसे कह सकते है जो मौलिक रूप से कैमरे कि भाषा को सशक्त बनाने में उसकी मदद करने के लिए लिखा गया हो। टेलीविज़न आलेख एवं कैमरा एक दूसरे के पूरक है।

प्रस्तुत इकाई में टेलीविज़न आलेख एवं लेखक की स्थिति, टेलीप्ले/स्क्रिनप्ले में अंतर, टेलेविजन आलेख के प्रकार - सोप आपेरा, एतिहासिक, धार्मिक एवं थ्रिलर, टेलीविज़न समाचार एवं वृतचित्र, आलेख की भाषा, टॉक शो का आलेखा, विज्ञापन, पाश्चात्य संगीत, थीम, आलेख एवं दृश्य का संबंध आदि के बारे में जानकारी दी गई है।

इकाई 26 'टेलीविज़न धारावाहिक लेखन' की है। आज दूरदर्शन एवं निजी टेलीविजनो में धारावाहिकों की धूम है। इसमे दो राय नहीं है कि टेलिविज नमाध्यम का उपयोग मुख्य रूप से सूचना एवं मनोरंजन के लिए बेहतर ढंग से किया जा सकता है। धारावाहिक इस संदर्भ में उल्लेखनीय काम करते हैं। क्योंकि इसमे मनोरंजन तो होता ही है और यदि उपयोगी बनाया जाए

तो टी.वी. धारावाहिक अप्रत्यक्ष रूप से सामाजिक हितों के संदेश के प्रसारण का आलंबन भी बन सकते हैं।

इस इकाई में टेलीविज़न धारावाहिक सामाजिक उपयोगिता, टी.वी. धारावाहिक क्षेत्र में विस्तार, टी.वी. धारावाहिक के मौलिक तत्व, आइडिया/विचार, विषय वस्तु, कोंस्टेट नोट, कथासार, स्थान एवं चरित्र, ट्रीटमेंट, टी.वी. आलेख एवं स्क्रीन प्ले में अंतर, और ज्ञानदीप का आलेख आदि बिन्दुओं कि विवेचना कि गई है।

आशा की जाती है प्रस्तुत खंड की तीन इकाइयां आपको टेलीविज़न-आलेख के विविध-पक्षों की जानकारी देगी। आप इसके अध्ययन के बाद एक कुशल एवं योग्य टेलीविज़न आलेख लेखक बन सकेंगे।

इकाई 24 टेलीविजन निर्देशन

इकाई की रूपरेखा

24.0 उद्देश्य
24.1 प्रस्तावना
24.2 टेलीविजन कार्यक्रम निर्माता और निर्देशक
24.3 निर्देशक और लेखक
24.4 निर्देशक एवं छायाकार
24.5 निर्देशक एवं यूनिट के अन्य सदस्य
24.5.1 सहायक निर्देशक
24.5.2 कैमरा सहायक / प्रकाश सहायक
24.5.3 ध्वन्यांकन सहायक
24.5.4 इलेक्ट्रीशियन
24.5.5 मंच सज्जा/वेषभूषा एवं अन्य
24.6 निर्देशक एवं कलाकार
24.7 निर्देशक एवं सम्पादक
24.8 निर्देशक एवं तकनीकी निर्देशक
24.9 निर्देशकीय शैली के तत्व
24.9.1 कथावस्तु की पकड़
24.9.2 दृश्यात्मकता
24.9.3 गत्यात्मकता
24.9.4 अभिनव
24.9.5 संगीत एवं ध्वनि
24.10 उदाहरण
24.11 शब्दावली
24.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें
24.13 निबंधात्मक प्रश्न

24.0 उद्देश्य

किसी भी टेलीविजन कार्यक्रम में निर्देशक की भूमिका उपयोगी होती है । वह कार्यक्रम चाहे दस सैंकण्ड का विज्ञापन हो या वर्षों तक चलने वाला धारावाहिक या वृत्तचित्र । निर्देशक की भूमिका के बिना यह संभव नहीं है । इसलिए यहां निर्देशन की महत्ता के बारे में विस्तार से समझना जरूरी है । अच्छा निर्देशक चाहे तो कार्यक्रम की गरिमा में चार चांद लगा सकता है। सारा दारोमदार उसी पर निर्भर करता है ।

इस इकाई में आपको टेलीविजन और निर्देशन के बारे में विस्तार से प्रामाणिक जानकारी दी जा रही है । निर्देशन के अभाव में किसी भी टेलीविजन धारावाहिक की कल्पना नहीं की जा सकती है ।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप

- टेलीविजन निर्देशन ओर उसकी उपयोगिता से परिचित हो जाएंगे ।
- टेलीविजन कार्यक्रम निर्माता और निर्देशक के आपसी संबंध तथा कार्य शैली को जान पाएंगे ।
- टेलीविजन निर्देशक एवं लेखक, निर्देशक एवं छायाकार के कार्य, उत्तरदायित्व तथा उनकी भूमिका के बारे में समझने लगेंगे ।
- निर्देशक एवं यूनिट के अन्य सदस्य सहायक निर्देशक, कैमरा सहायक, प्रकाश सहायक, ध्वन्यांकन सहायक, इलेक्ट्रीशियन मंच सज्जा एवं वेशभूषा सहायक के कार्यकलापों से अवगत हो सकेंगे ।
- इसके अतिरिक्त टेलीविजन निर्देशक एवं कलाकार, निर्देशक एवं संपादक, निर्देशक एवं तकनीकी निर्देशक के संबंधों, कार्य शैली तथा आडियो-विडियो सामग्री उत्पादन के बारे में जान सकेंगे ।
- निर्देशकीय शैली के तत्व-कथावस्तु की पकड़, दृश्यात्मक, गत्यात्मकता, अभिनय एवं संगीत और ध्वनि के विस्तृत कार्यक्षेत्र से परिचित हो जाएंगे ।
- आप टेलीविजन कार्यक्रम का सफलता पूर्वक निर्देशन कर सकेंगे ।

24.1 प्रस्तावना

यह तथ्य किसी भी देश के टेलीविजन कार्यक्रमों के निर्माण के लिए सर्वमान्य एवं महत्वपूर्ण है कि निर्देशक की भूमिका किसी जहाज के कप्तान की तरह होती है । जैसे किसी जहाज की सफल एवं संकट विहीन यात्रा की जिम्मेदारी उसके कप्तान की होती है यद्यपि उसके साथ कई अन्य सहयोगी भी होते हैं, उसी तरह किसी अच्छे कार्यक्रम के निर्माण के लिए किसी अच्छे निर्देशक का होना जरूरी है । इसीलिए इसे टेलीविजन में भी 'कैप्टन आफ द शिप' कहा जाता है । यदि कार्यक्रम तकनीकी या कलात्मक दृष्टि से बेहतर बनता है तो इसका श्रेय या अपयश इसके निर्देशक को ही मिलता है । कप्तान के साथ जहाज पर चाहे कितने भी दक्ष सहयोगी हों किन्तु कप्तान की अयोग्यता उन्हें भी ले डूबती है । टेलीविजन कार्यक्रमों के निर्माण में भी कलाकार, छायाकार एवं अन्य तकनीकी सहयोगी चाहे जितने दक्ष हो किन्तु निर्देशक की अयोग्यता ढेर सारे अपयश का कारण बन जाता है । इस दृष्टि से देखें तो यह तथ्य फिल्म कला पर भी लागू होती है । कई दर्शक फिल्म निर्देशक के नाम पर फिल्म देखने जाते हैं ।

पहले दर्शक स्व.मेहबूब, शांताराम, विमलराय, गुरुदत्त और स्व.राजकपूर की फिल्में उनके निर्देशक होने की वजह से देखते थे क्योंकि फिल्म के कलात्मक एवं तकनीकी पक्ष पर इनके व्यक्तित्व की स्पष्ट छाप मिलती थी । आज भी सफल टी.वी. कार्यक्रमों में इनके निर्देशकों के व्यक्तित्व के छाप की तलाश की जा सकती है । बी.आर. चौपड़ा (महाभारत), रामानन्द सागर (रामायण), रमेश सिप्पी (हमलोग एवं बुनियाद) जैसे निर्देशकों को टी.वी. की

भाषा पर पकड़ के लिए पहचाना जा सकता है । क्योंकि उसकी लता की निरंतरता की डोर में टी.वी. कार्यक्रम की माला को तैयार किया जाता है । इसे पटकथा लेखन से लेकर छायांकन, संपादन रख कलाकारों के अभिनय में भी देखा जा सकता है ।

कार्यक्रम के पूरे निर्माण की प्रक्रिया में निर्देशक का प्रभाव ही नजर आता है । चाहे कार्यक्रम का स्वरूप धारावाहिक हो या वृत्तात्मक हो या समाचार प्रसारण हो या कार्यक्रम छोटा हो या बड़ा, सभी निर्देशक के व्यक्तित्व से जुड़े लोग अपनी-अपनी भूमिका निभाकर अलग हो जाते हैं; किन्तु एक मात्र निर्देशक ही वह व्यक्ति होता है जो प्रसारण के बाद भी जुड़ा रहता है। दूसरे शब्दों में कहा जाएं तो टेलीविजन निर्देशक की भूमिका एक उच्चकोटि के रसोइए की तरह होती है, जिसे तमाम प्रकार के मसालों का बेहद समुचित उपयोग करना आता हो, जिसे लेखन से लेकर निर्माण एवं प्रसारण तक की व्यवस्था की पूरी जानकारी हो । भले ही उसे दक्षता हासिल न हो किन्तु निर्माण एवं प्रसारण तक की स्थितियों का ज्ञान होना किसी निर्देशक के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण माना जाता है । स्व.स्टेनली व यूब्रिक के शब्दों में 'फिल्म निर्माण कई रचनात्मक एवं तकनीकी निर्माणों का धारावाहिक है और यह उसके निर्देशक का दायित्व है कि किस हद तक सही निर्णय ले पाता है' । टी.वी. कार्यक्रम के साथ ठीक ऐसी ही बात लागू होती है । शायद यही कारण है कि विश्व के कई समीक्षकों ने फिल्म निर्देशकों को सुपरस्टार माना है तो कई लोगों की इस पर आपत्ति भी है । खासकर कलाकारों को लगता है कि फिल्में या टेलीविजन कार्यक्रम उनकी लोकप्रियता के कारण सफल होती हैं । जब कि सच्चाई यह है कि कलाकार भी निर्देशक के नाम से प्रभावित होते हैं और उन्हें देखकर ही किसी प्रोजेक्ट से अलग होते या जुड़ते हैं ।

24.2 टेलीविजन कार्यक्रम निर्माता और निर्देशक

टेलीविजन निर्माण की कला यद्यपि ढेर सारे कलाकारों एवं तकनीकी विशेषज्ञों की कल्पना का यथार्थ रूप होती है । चूंकि निर्देशक की भूमिका इन तमाम कलात्मक क्षेत्रों को जोड़ने की होती है इसलिए इसे साधारण नहीं माना जा सकता । संगीतकार, चित्रकार, वेष-भूषाकार, मंच सज्जाकार, छायाकार, उपन्यासकार या संपादक, स्क्रीन से लेकर टी.वी. निर्माण से जुड़े सभी कलाकार अपनी स्वतन्त्रता के साथ अलग-अलग रूप से काम करते हैं । किन्तु निर्देशक इन तमाम स्वतंत्र विभागों के साथ अपनी कल्पना की तारतम्यता से जोड़कर विशिष्ट प्रभाव पैदा करने वाला रचनात्मकता कलाकार है । लेकिन जबसे इलेक्ट्रानिक कैमरे का इस्तेमाल टेलीविजन के क्षेत्र में होने लगा है तब से निर्देशक की भूमिका गौण हो गई है और आमतौर पर अब पूंजी लगाने वाला निर्माता ही निर्देशक की भूमिका निभाने लगा है ।

फिल्मों में भी आमतौर पर निर्माता ही निर्देशक की भूमिका निभाते रहे थे । वी.शांताराम, राजकपूर विमलराय, सत्यजित राय जैसे महान निर्देशकों ने भी निर्माता की भूमिका भी निभाई है । किन्तु टेलीविजन में यह प्रचलन और ज्यादा बढ़ गया है । इस दृष्टि से देखा जाएं तो निर्देशक की भूमिका मात्र कलात्मक एवं तकनीकी पक्ष तक ही सीमित नहीं रहती बल्कि इस के निर्माण के लिए धन जुटाने का प्रयत्न भी करना पड़ता है । इसे अन्य शब्दों में कहा जाएं तो टेलीविजन के क्षेत्र में निर्देशक ही एक ऐसा जिम्मेवार तत्व है जिसे धन जुटाने से

लेकर निर्माण एवं प्रसारण तक की व्यवस्था करनी पड़ती है । हालांकि अपने बोझ को कम करने के लिए वह अपने सहायक भी नियुक्त करता है किन्तु सब का संचालन एवं नेतृत्व उसी के हाथ में होता है ।

यहां टेलीविजन कार्यक्रम निर्माता और निर्देशक के बीच एक विभाजक रेखा है, उसे समझना आवश्यक है । भारतीय दूरदर्शन में निर्देशक को निर्माता के रूप में जाना जाता रहा है जबकि मूल रूप से निर्माता दूरदर्शन संस्था होती है । जबकि विदेशों या निजी क्षेत्र की कंपनियों में कार्यक्रम निर्माण के लिए वित्तीय व्यवस्था करने वाला व्यक्ति निर्माता कहलाता है । इसलिए उसे यह अधिकार होता है कि वह निर्देशन की जिम्मेवारी भी स्वयं ही संभाले या किसी अन्य को यह दायित्व सौंपे । इस संदर्भ में उल्लेखनीय है कि निर्माता तो अपनी पसंद के निर्देशक का चुनाव कर सकता है किन्तु निर्देशक चाहे भी तो अपनी पसंद का निर्माता नहीं चुन सकता । यह बात अलग है कि कोई निर्माता-निर्देशक की योजना के अनुसार धन लगाने को तैयार हो जाएं किन्तु निर्माता के पास यह अधिकार सुरक्षित होता है कि वह किसे अपना निर्देशक बनाए या खुद निर्माता-निर्देशक की भूमिका निभाए । सामान्य तौर पर टेलीविजन में स्वयं ही निर्माता एवं निर्देशक होता है । जैसे फिल्मों में नामी-गिरामी निर्माता आज भी अपनी फिल्मों का निर्माण एवं निर्देशन स्वयं ही करते हैं, चाहे वे सुभाष घई हों या श्याम बेनेगल या राकेश रोशन । कभी-कभी अपवाद के रूप में खुद निर्माता की भूमिका में रहकर दूसरों को भी निर्देशन का अवसर देते हैं किन्तु ऐसे अवसर कम ही आते हैं ।

24.3 निर्देशक एवं लेखक

जैसे निर्माता एवं निर्देशक के बीच संबंधों को निर्धारित करने वाली एक अव्यक्त- सी सीमा रेखा होती है । वैसे ही लेखक और निर्देशक के बीच भी एक ऐसी पारदर्शी रेखा होती है, जिसे तकनीकी दृष्टि से विभाजित करना कठिन होता है । लेखक की कल्पना के तत्व एवं रूप जब मुद्रित होकर सामने आ जाते हैं तब उसे यथार्थ रूप में निर्देशक ही ढालता है । क्योंकि कथा या पटकथा लिखने के बाद लेखक की भूमिका समाप्त हो जाती है और जहां यह समाप्त होती है वहां से निर्देशक की भूमिका शुरू होती है । आमतौर पर यह भी देखा जाता है कि निर्देशक अपनी कल्पना की कथा वस्तु को बड़े या छोटे परदे पर उतारने की कोशिश करता है; फिर भी बड़े निर्माता-निर्देशक इसके लिए लेखकों को भी अपने साथ जोड़ लेते हैं ।

चूंकि फिल्म या टेलीविजन पटकथा लेखक अपनी व्यावसायिक निपुणता के कारण एकाग्रता के साथ निर्देशक को सहयोग देते हैं । इसलिए इससे निर्देशक को कल्पना के यथार्थ रूप को परदे पर लाने में सुविधा मिल जाती है । यहां ऐसा कोई नियम नहीं है कि लेखक निर्देशक नहीं हो सकता या निर्देशक लेखक नहीं हों सकता । गुलजार फिल्म निर्माण में अब से पहले गीत लेखक के रूप में जुड़े, फिर पटकथा रख संवाद लेखक की भूमिका निभाई और फिर स्वतंत्र रूप से निर्देशन का कार्यभार भी संभाला । 'मिर्जा गालिब' टी.वी. कला की दृष्टि से गुलजार की श्रेष्ठ कृति मानी जा सकती है । दृश्यों के प्रभाव को संवादों के सहयोग से कितना प्रभावी बनाया जा सकता है, धारावाहिक इसका सबसे उत्तम उदाहरण है ।

लेखक की भूमिका इसीलिए महत्वपूर्ण होती है कि वह दृश्य-प्रभाव एवं शब्द-प्रभाव के बीच कितना संतुलन बनाने में सफल होता है और यदि नहीं होता है तो इसको संतुलित करने की जिम्मेवारी निर्देशक की होती है । कई बार कार्यक्रम निर्माण के दौरान लेखक अपने लिखे गए दृश्यों एवं संवादों के साथ इस हद तक भावनात्मक संबंध जोड़ लेता है कि उसका संपादन उसे गवारा नहीं होता । यदि वह निर्देशक है तो उसे काट नहीं सकता किन्तु यदि कोई दूसरा निर्देशक है तो उसके द्वारा संपादित या उस हिस्से को काटा जाना लेखक सहन नहीं करता । यह व्यावसायिक दृष्टि से उचित नहीं है । चूंकि टेलीविजन कार्यक्रम निर्माण व्यक्तिगत रूप से स्वतंत्र योगदान के बावजूद एक सामूहिक कला है इसलिए इसे सम्मान का मुद्दा नहीं बनाया जाना चाहिए। चूंकि यह निर्देशक का माध्यम है और कैमरे के माध्यम से किसी भी महान कृति को दुबारा लिखने की कोशिश की जाती है । इसलिए इस हकीकत को भी लेखकों को स्वीकार कर लेना चाहिए । इस प्रकार जैसे ही लेखक या पटकथा लेखक अपना आलेख निर्देशक को सुपुर्द कर देता है उसकी सम्पत्ति निर्देशक की हो जाती है ।

इस संदर्भ में एक महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि लेखक और निर्देशक के बीच के संबंधों की लयात्मकता में ज्यादा अंतर नहीं होना चाहिए । जब तक दोनों की कल्पनाशीलता का धरातल एक नहीं होता तब तक किसी भी कल्पना या आइडिया को यथार्थ रूप नहीं दिया जा सकता । शायद बहुत कम लोगों को मालूम है कि स्व. विमलराय की फिल्म 'मधुमती' की पटकथा स्व. ऋत्विक घटक जैसे बंगला फिल्मों के महान निर्देशक ने लिखी थी । जिसका परिणाम यह हुआ था कि इस वर्ष सबसे ज्यादा पुरस्कार 'मधुमती' फिल्म को उसकी असाधारण गुणवत्ता के लिये दिए गए थे । गरज यह कि संवेदना एवं कल्पनाशीलता के धरातल पर यदि दोनों की मानसिकता एक है तो उसका प्रभाव कार्यक्रम की स्तरीयता पर पड़ता है । इसलिए जरूरी है कि टेलीविजन कार्यक्रम का निर्माण करते समय लेखक एवं निर्देशक दोनों की विचार धाराए, कल्पनाशीलता एवं कथातत्व विवादास्पद नहीं हों और संवेदना के स्तर पर भी दोनों में तालमेल हो । इस प्रकार की आशंका तब नहीं होती जब निर्देशक स्वयं लेखक या पटकथा लेखक भी होता है । वह किसी धारावाहिक या कार्यक्रम को अपनी कल्पना से कहीं ले जा सकता है या कहीं काट सकता है । लेखक एवं निर्देशक के बीच यदि सही तारतम्य बैठ गया हो तो हम लोग, बुनियाद, तारा, शांति जैसे धारावाहिको की रचना संभव है ।

24.4 निर्देशक एवं छायाकार

एक बार यदि निर्देशक किसी आलेख को स्वीकृत कर लेता है तो उसके बाद की प्रक्रिया में छायाकार का चुनाव करना पड़ता है । निर्देशक और छायाकार का संबंध बड़ा ही संश्लिष्ट किन्तु संवेदनापूर्ण होता है क्योंकि निर्देशक अपने चरित्र को जिस रूप में प्रस्तुत करना चाहता है उसको यथार्थ रूप कैमरे एवं प्रकाश के सहयोग के साथ छायाकार ही दे सकता है । इसलिए कल्पनाशीलता के आधार पर निर्देशक एवं छायाकार की मानसिक धाराओं एवं उसके स्तर की एकरूपता बहुत जरूरी है । दोनों के बीच समझदारी जितनी गहरी होगी फिल्म का छायांकन उतना ही संवेदनशील होगा । इस में दो राय नहीं हो सकती । इसीलिए फिल्म निर्देशकों और छायाकारों का एक बार गठबंधन हो जाने के बाद आसानी से नहीं टूटता । स्व. राजकपूर के प्रिय कैमरा मैन राघू करमकर उनकी तमाम फिल्मों में छायांकन करते रहे । मानसिक तौर पर

वे दोनों इतने करीब हो गए थे कि 'जिस देश में गंगा बहती है' का निर्देशन भी राजकपूर ने अपने छायाकार के हाथों सौंप दिया था । कुरोसावा ईगमर वर्गमैन जैसे निर्देशकों के प्रिय छायाकार स्वेन नवेकिस्ट रहे ।

इसमें दो राय नहीं है कि दोनों के संबंध इतने जटिल हैं कि इन्हें भी एक दूसरे के अलग करके देखना कठिन है । आलेख तैयार होने के बाद पूरी फिल्म का दृश्य निर्देशक अपने मस्तिष्क में उतारता है जिसे कैमरामैन यानि छायाकार साकार करके दिखला देता है । दूसरे शब्दों में कहा जाएं तो निर्देशक की हर बात, उस के मस्तिष्क के हर प्रेम को छायाकार यथार्थ रूप में सामने रख देता है । इसलिए दोनों के बीच संवेदनशीलता की गहराई को इसी से समझ लेना चाहिए । इन दोनों के बीच कलात्मक संबंधों के साथ भावनात्मक संबंधों का होना उतना ही जरूरी है । इसके अतिरिक्त छायाकार को निर्देशक के साथ उन आध्यात्मिक या दार्शनिक मूल्यों को भी समझने की कोशिश करनी पड़ती है, जिसे लेखक ने अपनी कल्पना के साथ कलमबद्ध करने की कोशिश की है । दूसरे रूप में देखें तो छायाकार अपने कैमरे, उसके विभिन्न कोणों एवं प्रकाश के सहयोग से उन दृश्यों को दोबारा प्रस्तुत करता है जिसे लेखक ने पहले ही कलम से लिख दिया है। कैमरे और कलम के इस्तेमाल का संतुलन बनाए रखने में निर्देशक की भूमिका महत्वपूर्ण होती है क्योंकि परदे तक लाने में अंतिम निर्णायक वहीं होता है । अब यदि निर्देशक के पास कैमरे के इस्तेमाल या उसकी तकनीक का सामान्य ज्ञान न हो तो फिर कार्यक्रम निर्माण में असुविधा होती है या वांछित परिणाम नहीं निकलते हैं । इस संदर्भ में अधिकतर टेलीविजन कार्यक्रमों के निर्माण में आए दिन विसंगतियां उजागर होती रहती हैं ।

चूंकि वीडियो कैमरे में ध्वनि एवं दृश्य की रिकार्डिंग की प्रक्रिया आसान सी लगती है इसीलिए अधिकतर निर्माता स्वयं ही निर्देशन करने लग जाते हैं । जबकि कार्यक्रम निर्माण की अन्य प्रक्रियाओं से वे परिचित नहीं होते । परिणाम यह होता है कि अपनी अल्पज्ञान के कारण किसी कुशल कारीगर के चक्कर में फंस जाते हैं और परिणाम जब सामने आता है तो पता चलता है कि जिस प्रकार से निर्देशक यह निर्माण कार्यक्रम बनाना चाहता था वैसा न बनकर जैसा छायाकार या अन्य तकनीशियनों ने चाहा था वैसा बन गया है । यह टेलीविजन कार्यक्रम निर्माण की दुखद स्थिति है कि नाम भले ही निर्देशक के रूप में किसी ओर का लिखा जा रहा है । जबकि वह पूरा कार्यक्रम छायाकार या अन्य तकनीशियनों की मर्जी से बनाया गया है । यह किसी भी रूप में उचित नहीं है ।

निर्देशक एवं कैमरामैन की गहरी सुरुचिपूर्णता एवं संवेदनात्मक स्तर पर एकरूपता एवं आपसी समझदारी से ही अच्छी कृति की रचना की जा सकती है । चाहे वह धारावाहिक या वृत्तचित्र या विज्ञापन का ही कार्यक्रम क्यों न हो ।

24.5 निर्देशक एवं यूनिट के अन्य सदस्य

जैसा कि यह माना जा चुका है कि टेलीविजन कार्यक्रम के निर्माण में हर व्यक्ति अलग- अलग स्वतंत्र रूप से कार्य करते हुए एक सामूहिक कला की सफलता के लिए जिम्मेवार होता है । यहां केवल लेखक या छायाकार ही काफी नहीं होते जिनके साथ मिलकर निर्देशक कार्यक्रम का निर्माण कर सकता है । इनके अतिरिक्त यूनिट के अन्य दूसरे सहायक भी होते हैं। जिनका निर्देशक के साथ कार्यक्रम के निर्माण के दौरान सीधा संबंध होता है । भले ही उनका

विभाग सहायक के रूप में होता है किन्तु बहुत ही महत्वपूर्ण होता है । इनमें सबसे पहला नाम निर्देशक के सहायक का लिया जा सकता है ।

24.5.1 सहायक निर्देशक

इस व्यक्ति की भूमिका भी महत्वपूर्ण होती है क्योंकि कार्यक्रम निर्माण के दौरान इससे संबंधित तमाम विभागों के साथ संबंध एवं तालमेल बिठाए रखकर निर्देशक को सहयोग देना इसका दायित्व होता है । यह निर्माता के प्रबंधक या निर्माता से मिलकर निर्माण प्रक्रिया को सहज बनाए रखता है तथा निर्माण के दौरान जरूरत की वस्तुओं की सूची बनाकर तैयार रखने से लेकर कलाकारों को सही समय पर सेट पर लाने की जिम्मेवारी भी लेनी होती है । यदि धारावाहिक या अन्य प्रकार की टेलि नाटकों का निर्माण हो रहा हो तो इसके साथ कन्टीन्यू बाय या गर्ल का सहयोग भी लिया जा सकता है जो संवादों या आलेख के अनुरूप कलाकारों को तैयार कर सकते हैं ।

24.5.2 कैमरा सहायक/प्रकाश सहायक

हालांकि डिजिटल कैमरे के आविष्कार से ऐसे सहायकों पर होने वाले खर्चों में कमी आ गई है क्योंकि प्रभावशाली कैमरे के लिए अब ज्यादा प्रकाश व्यवस्था की जरूरत नहीं है फिर भी छायाकार को अन्य सुविधाए प्रदान करने के लिए इनका सहयोग लिया जा सकता है । जैसे कैमरे को एक जगह से दूसरी जगह या ट्राइपाड को ढोकर अन्य लोकेशन पर ले जाना या वैसा कोई भी काम जिसे करना छायाकार को सुविधा प्रदान कर सहायक कैमरामैन या प्रकाश सहायक कर सकते हैं । हालांकि कम प्रकाश की जरूरत नए डिजिटल कैमरों में तो होती है फिर भी अच्छे कैमरा परिणाम के लिए प्रकाश तो जरूरी है ही । इसके लिए भी इनका उपयोग किया जा सकता है ।

24.5.3 ध्वन्यांकन सहायक

हालांकि इन कैमरों में बिल्टन माइक की व्यवस्था पहले से ही होती है जिसके लिए किसी सहायक की जरूरत नहीं होती । लेकिन इस ध्वन्यांकन की गुणवत्ता व्यावसायिक दृष्टि से अच्छी नहीं मानी जाती । इसके लिए अलग से माईक्रोफोन की जरूरत होती है । इन कैमरों में दो माइक की एक साथ व्यवस्था की जा सकती है । इसके लिए अलग से सहायकों की जरूरत होती है । निर्देशक के साथ इनका बेहतर संबंध हो यह जरूरी है । इसे अंग्रेजी में बूम मैन भी कहा जाता है, हालांकि फिल्म में न सिर्फ सहायक की बल्कि 'साउंड रिकार्डिस्ट' की भी जरूरत होती है ।

24.5.4 इलेक्ट्रीशियन

फिल्म निर्माण में चूंकि ढेर सारी लाईटें एक साथ लगानी पड़ती हैं इसलिए एक इलेक्ट्रीशियन की जरूरत अलग से होती है किन्तु डिजिटल कैमरा की रिकार्डिंग में आम तौर पर यह काम सहायक छायाकार/प्रकाश सहायक के सहयोग से पूरा किया जाता है । किन्हीं विशेष परिस्थितियों में इनकी संख्या घटाई या बढाई जा सकती है ।

24.5.5 मंच सज्जा, वेषभूषा एवं रूपसज्जा

इनके अतिरिक्त मंच सज्जा, वेशभूषा, प्रोपर्टी एवं रूपसज्जा जैसे अनेक अनुभाग हैं जो सीधे निर्देशक की आवश्यकता से जुड़े हुए हैं और आलेख के अनुसार चरित्रों एवं लोकेशन के लिए जरूरी माने जाते हैं, जैसे यदि धारावाहिक का निर्माण हो तो उसके लिए मंच सज्जा, वेशभूषा एवं रूप सज्जा की जरूरत होगी । उन चरित्रों की रूप सज्जा, मंच सज्जा, आलेख में वर्णित चरित्रों के अनुरूप की जाएंगी । यदि वृत्त चित्र का आलेख है तो वास्तविक लोकेशन पर कार्यक्रम रिकार्ड किया जाएगा । इतने कलाकारों का संबंध किसी भी निर्देशक के साथ होना बहुत जरूरी है । यह निर्देशक ही है जो अपने आलेख के अनुसार किसी कल्पना को ठोस रूप में ढालने की प्रेरणा देता है । यह उसके नेतृत्व की गत्यात्मक क्षमता का प्रभाव है जो सब को संचालित करता है और 2001 में गुप्त काल से चाणक्य एवं इसके ऐतिहासिक परिवेश को छोटे परदे पर उतारने की प्रेरणा देता है । यह निर्देशक ही है जो कार्यक्रम निर्माण की केन्द्रीय प्रेरणा शक्ति है ।

24.6 निर्देशक एवं कलाकार

यदि टेलीविजन कार्यक्रम की कथावस्तु धारावाहिक या वृत्तात्मक चित्रों के लिए कलाकारों द्वारा नाटकीय प्रभावों को उत्पन्न करने की जरूरत होती है तो कलाकारों का चयन भी जरूरी प्रक्रिया है । कलाकारों का चयन केवल निर्देशक आलेख की कल्पनाशीलता के अनुसार करता है । जिसके लिए कम से कम रूप सज्जा के बाद ज्यादा से ज्यादा विश्वसनीय एवं प्रभावी चरित्र की प्रस्तुति की संभावना बनी रहे । फिल्मों में तो 'स्टार सिस्टम' की वजह से खासकर बालीवुड में, चरित्रों के चुनाव में निर्देशकों को काफी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है । वर्तमान में बहुत कम ऐसे फिल्म निर्देशक हैं जो कलाकारों पर नियंत्रण रख पाते हैं । वर्ना बालीवुड में निर्देशकों से ज्यादा कलाकारों का वर्चस्व बना हुआ है क्योंकि निर्माता मानता है कि उसकी कमाई के मूल में कलाकारों के नामों की महिमा है, जब कि हालीवुड में आज भी निर्देशकों का वर्चस्व बना हुआ है।

टी.वी. कार्यक्रमों में अभी तक ऐसी परिपाटी शुरू नहीं हुई है, कुछ असामान्य किस्म के कार्यक्रम जैसे 'कौन बनेगा करोड़पति', 'जीतो छप्पर फाड़ के' में मशहूर फिल्म अभिनेताओं ने अपना वर्चस्व दिखलाने की कोशिश की है किन्तु कहना कठिन है कि वे अपना जादू कब तक बरकरार रख पाएंगे । गरज यह कि नियमानुसार कलाकारों को तो निर्देशक की कल्पना को साकार करने की कोशिश करनी चाहिए लेकिन यह संबंध निर्देशक-निर्देशक पर निर्भर करता है । एक निर्देशक जिसने पूरे कार्यक्रम की रिकार्डिंग अपनी मस्तिष्क में तैयार कर ली है वह चाहता है कि अभिनेता उसके हिसाब से अभिनय करे जबकि एक अनुभवहीन या अयोग्य निर्देशक सारा कुछ कलाकारों की इच्छा पर छोड़ देता है । इन दोनों प्रकार के निर्देशकों के कार्यक्रमों की गुणवत्ता में काफी फर्क हो जाता है ।

यदि कलाकारों के अभिनय पर से निर्देशक का वर्चस्व समाप्त हुआ तो बहुत संभव है कि परिणाम और प्रभाव आलेख के बिल्कुल विपरीत हो जाएं । इसलिये निर्देशक को यह स्पष्ट होना चाहिए कि कौन सा कलाकार क्या कर सकता है? आलेख में वर्णित चरित्र के शारीरिक

गठन अभिनय की विविधता, संवाद अदायगी की क्षमता एवं उसके हाव-भाव के अनुरूप कोई कलाकार है अथवा नहीं?

24.7 निर्देशक एवं संपादक

कार्यक्रम की पूरी रिकार्डिंग के बाद पहला कार्य संपादन का होता है । इसके दौरान निर्देशक संपादक के साथ मिलकर कार्यक्रम की गति, संगीत की लयात्मकता एवं एन.जी.शॉट्स की कटाई-छंटाई कर कार्यक्रम को प्रसारण के योग्य बनाता है । कई समीक्षकों का मानना है कि अलग से कार्यक्रम का निर्माण तो संपादन टेबल पर होता है । कई मामलों में यह सही भी है । यदि निर्देशक एवं संपादक की कलात्मक दृष्टि की दिशा और गति एक सी है तो इसका प्रभाव कार्यक्रम की गुणात्मकता पर देखा जा सकता है । खासकर वीडियो संपादन की मशीनों में अनन्त प्रकार के प्रभाव उत्पन्न करने की असीमित संभावनाए हैं । संपादन प्रक्रिया आधुनिक तकनीकी सुविधाओं के कारण काफी सस्ती एवं प्रभावोत्पादक हो गई है । इसीलिए यदि आलेख के अनुसार या इससे अलग हटकर संपादक और निर्देशक चाहें तो असंभव को भी संभव बनाकर टेलीविजन के परदे पर उतार सकते हैं लेकिन इसके लिए निर्देशक एवं संपादक के काल्पनिक एवं बौद्धिक तरंगों की एकलयता होनी आवश्यक है ।

यह भी एक तथ्य है कि यदि संपादक चाहे तो फिल्म की काया संपादन के दौरान बदलकर रख सकता है । किन्तु इसके लिए निर्देशक का नियंत्रण होना आवश्यक है । बिना निर्देशक की सहमति के किसी भी प्रकार का प्रसारण उचित नहीं होगा क्योंकि यह एक ही व्यक्ति है जो इस विधा के हर राह पर गहरे रूप से जुड़ा होता है, जबकि हर विभाग स्वतंत्र रूप से कार्य कर रहा होता है । सिर्फ निर्देशक ही वह व्यक्ति है जो कि सबकी स्वतंत्रता का सम्मान करते हुए अपनी कल्पना एवं विधा पर पकड़ रखने के कारण एक सूत्र, एक लय, एक उद्देश्य और इसकी कलात्मकता एवं तकनीकी पक्ष में संतुलन बनाते हुए किसी कार्यक्रम को प्रसारण के योग्य बनाता है ।

24.8 निर्देशक एवं तकनीकी निर्देशक

सिर्फ संपादन टेबल पर ही संपादक के साथ निर्देशक की जिम्मेदारी खत्म नहीं हो जाती। इसकी तकनीकी गुणवत्ता बनाए रखने के लिए अभियांत्रिकी विभाग से भी सहयोग लेना जरूरी होता है । यदि रिकार्डिंग लोकेशन पर हो रही हो तो और बात है किन्तु यदि कार्यक्रम स्टूडियो में हो रहा हो और एक से अधिक कैमरों का उपयोग किया जा रहा है तो इसमें तकनीकी निर्देशक का सहयोग लेना जरूरी हो जाता है क्योंकि मल्टी कैमरे की व्यवस्था से जुड़े अन्य आवश्यक उपकरणों की सुविधाए प्रदान करना तकनीकी निर्देशक की जिम्मेदारी होती है । वह रिकार्डिंग से लेकर प्रसारण तक समस्त प्रकार के अभियांत्रिकी एवं तकनीकी उपकरणों एवं सुविधायें मुहैया कराता है । इसलिए यदि तकनीकी निर्देशक की भूमिका कार्यक्रम में जरा सी भी ढीली होती है तो इसकी प्रसारण एवं तकनीकी गुणवत्ता पूरी कलात्मक को लेकर बैठ सकती हैं ।

24.9 निर्देशकीय शैली के तत्व

यदि इस पूरे संदर्भ को देखें तो पता चलता है कि किसी भी टेलीविजन कार्यक्रम के निर्माण से लेकर प्रसारण तक निर्देशक ही एक ऐसा व्यक्ति है जो हर स्तर पर गहरे जुड़ा हुआ है। इसलिये यदि उसे 'कैप्टन आफ दि शिप' की संज्ञा दी गई है तो अस्वाभाविक नहीं है । यह तो उसकी चिन्ता का एक पक्ष है जो निर्माण के हर स्तर से जुड़ी है किन्तु इससे अलग कुछ और महत्वपूर्ण तथ्य हैं जो किसी निर्देशक को एक शैली प्रदान करते हैं जिसकी वजह से निर्देशक सबसे अलग दिखलाई पड़ता है । कमोवेश विशिष्ट शैली के निम्न लिखित तत्व किसी न किसी रूप में सभी निर्देशकों के पास होते ही हैं ।

24.9.1 कथावस्तु की पकड़

हालांकि जैसा पहले भी लिखा गया है कि टेलीविजन कार्यक्रमों के निर्माता आज कल स्वयं ही निर्देशक का कार्यभार संभालने लगे हैं किन्तु उन निर्देशकों को जिन्हें दूसरे निर्माता या निजी कंपनियां अपने कार्यक्रमों के निर्देशक के रूप में अनुबंधित करना चाहती हैं या करती हैं उनमें कथावस्तु के चुनाव की प्रतिभा होती है । इसलिए चाहे फिल्म हो या टेलीविजन कार्यक्रम किसी निर्देशक की कल्पनाशीलता या रुचि का पता उसके कथावस्तु के चुनाव से ही चल जाता है। यदि वह कलात्मक फिल्मों या टी.वी. के कार्यक्रमों में निर्माण की क्षमता रखता है तो ऐसी ही किसी क्लासिक साहित्य या गंभीर लेखक की रचना का चुनाव करेगा । ठीक इससे विपरीत यदि वह सामान्य स्तर की निर्देशकीय प्रतिभा का व्यक्ति होगा तो क्लासिक के नाम पर नाक भौं सिकोड़ता हुआ हल्की-फुल्की विषयवस्तु का चुनाव करेगा । उसके आलेख के चुनाव से ही उसकी रुचि का अंदाजा हो सकता है ।

24.9.2 दृश्यात्मकता

किसी निर्देशक की प्रतिभा का अनुमान कार्यक्रम की प्रभावशाली या अप्रभावी दृश्यात्मकता से भी लगाया जा सकता है, उसके छायांकन करने की शैली और 1800 के दृश्यों को कितने रूप में रूपायित करने की क्षमता है । इससे भी उसकी शैली का अन्दाजा हो सकता है ।

24.9.3 गत्यात्मकता

हर निर्देशक की किसी भी दृश्यात्मक छवि को प्रस्तुत करने की अपनी शैली होती है । कोई कैमरे की धीमी गति को पसंद करता है । किसी निर्देशक के कैमरे की गति बड़ी आक्रामक ढंग से गतिशील रहती है । कोई निर्देशक कैमरे और सब्जेक्ट, दोनों में गति चाहता है, तो कोई सब्जेक्ट को स्थिर रखकर कैमरे का कोण बदल कर देखने में रुचि लेता है । किसी निर्देशक को कैमरे का फास्ट जूम इन अच्छा लगता है तो किसी को स्लो पैनिंग या जूम इन बहुत भाता है।

24.9.4 अभिनय

कलाकारों की अभिनय शैली से भी निर्देशक की शैली का अन्दाजा लगाया जा सकता है। उदाहरण के लिए दिलीप कुमार के अभिनय को विमलराय की फिल्मों और बी.आर. चौपड़ा के निर्देशन में बनी फिल्मों के अभिनय का बारीकी से निरीक्षण करें तो आप को पता चल सकता है कि हर निर्देशक हर कलाकार को विभिन्न कोणों से देखता है और प्रस्तुत करता है ।

24.9.5 संगीत एवं ध्वनि

इन तत्वों के इस्तेमाल से किसी भी निर्देशक की शैली का निर्धारण कर सकते हैं । बहुत से ऐसे निर्देशक है कि संगीत या पार्श्व संगीत का इस्तेमाल दृश्य की तीव्रता को उभारने के लिए करते हैं या कुछ ऐसे निर्देशक भी हैं जो वातावरण की तात्कालिक ध्वनियों को ज्यादा महत्व देते हैं । कोई निर्देशक पूरी फिल्म में खामोशी को साउंड संगीत से भरता है । कोई आवश्यकतानुसार संगीत का इस्तेमाल करता है ।

24.10 उदाहरण

इस पूरे संदर्भ को यदि ध्यान से देखें तो आमतौर पर एक निर्देशक के लिए टेलीविजन विधा की कलात्मक एवं तकनीकी जानकारी के साथ संगीत, साहित्य, चित्रकला एवं नाट्यकला जैसी अन्य विधाओं के साथ 'इन्टरएक्शन' भी बहुत जरुरी है । आज सेटेलाईट चैनलों के द्वारा अधिकतर कार्यक्रमों को गौर से देखें तो निर्देशकीय वर्चस्व की कमी दिखलाई पड़ सकती है क्योंकि कहीं कलाकारों के अभिनय का वर्चस्व है तो कहीं रेडियो से प्रभावित संवादों का । यहां तक कि छोटे-छोटे शब्दों के साथ अधिकतर कार्यक्रमों में कट देखे जा सकते हैं । उदाहरण के लिए-

कट - सुनो
कहो
कट - तुम बाजार जा रहे हो ।
कट - हां,
कट - मैं सोच रही थी
कट - क्या?
कट - लो देखो रमेश आ गया

इस पूरे संवाद में रेडियो का प्रभाव देखा जा सकता है । यहां निर्देशक के होने या नहीं होने का कोई फर्क नहीं पड़ता क्योंकि आलेख एवं निर्देशन के स्तर पर कहीं कोई संबंध दिखलाई नहीं देता । इस दृश्य में निर्देशक का काम इतने सारे कट एवं संपादन से बचाते हुए कम समय में दृश्य का उद्देश्य दर्शकों के सामने रखना था । उदाहरण के लिए इसे इस तरह से भी फिल्माया जा सकता है-पत्नी पति से पूछती है- क्या तुम बाजार जा रहे हो, कैमरा टू शाट पोजिशन पर है, पति सर हिलाता है । तभी रमेश का प्रवेश दिखलाई पड़ता है ।

24.11 शब्दावली

दोनों विधाओं के (फिल्म, टेलीविजन) के पारिभाषिक शब्द लगभग एक ही हैं क्योंकि पहले बाह्य छायांकन या समाचारों की कवरेज के लिए 16 एम.एम. फिल्म कैमरे का इस्तेमाल किया जाता था । किन्तु टी.वी. कैमरे खासकर 3 एन.जी. कैमरे के आविष्कार के कारण कार्यक्रमों के निर्माण में 16 एम.एम का इस्तेमाल लगभग नहीं के बराबर होता है किन्तु उसके परिभाषित शब्द टेलीविजन कैमरे के लिए भी इस्तेमाल किए जाते हैं । कुछ सामान्य रूप से प्रचलित शब्द इस प्रकार हैं-

क्लोज अप	-	सी.यू
बिग क्लोजअप	-	बी.सी.यू
मिड क्लोजअप	-	एम.सी.यू
मिड शॉर्ट	-	एम.एस.
लोग शॉट	-	एल.एस
एक्सट्रीम लॉग शॉट	-	एक्सट्रीम एल.एस.
पैनिंग शॉट	-	लेफ्ट टू राइट/राइट टू लेफ्ट
टिल्प अप/टिल्ट डाउन		
टु शॉट		
कट		
डिजाल्व		

24.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. पटकथा लेखन-मनोहर श्याम जोशी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
2. टेलीविजन लेखन-असगर वजाहत, प्रभात रंजन, राधाकृष्ण, नई दिल्ली

24.13 निबंधात्मक प्रश्न

1. टेलीविजन निर्देशन से आप क्या समझते हैं? विवेचना कीजिए ।
2. 'कुशल निर्देशन के अभाव में कोई भी टेलीविजन कार्यक्रम सम्पन्न नहीं किया जा सकता' । इस कथन की विवेचना करते हुए अपने विचार व्यक्त कीजिए ।
3. टेलीविजन यूनिट के विभिन्न सदस्यों का परिचय देते हुए उनके महत्व तथा टी.वी. कार्यक्रम में उनके योगदान को रेखांकित कीजिए ।
4. निर्देशकीय शैली के विभिन्न तत्वों की समीक्षा कीजिए ।
5. संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए
    1. कथावस्तु की पकड
    2. अभिनय
    3. मंच सज्जा एवं वेश-भूषा

4. दृश्यात्मकता?

इकाई 25 टेलीविजन आलेख

इकाई की रूपरेखा

25.0 उद्देश्य

25.1 प्रस्तावना

25.2 टेलीविजन आलेख (स्किप्ट) एवं लेखक की स्थिति

25.3 टेलिप्ले/स्किन प्ले

25.4 टेलीविजन आलेख के प्रकार

25.4.1 सोप आपेरा

25.4.2 ऐतिहासिक

25.4.3 धार्मिक एवं थ्रिलर

25.4.4 टेलीविजन समाचार एवं वृत्तचित्र

25.5 आलेख की भाषा

25.6 टाक शो का आलेख

25.7 विज्ञापन

25.8 पाश्चात्य संगीत

25.9 थीम

25.10 आलेख एवं दृश्य का संबंध

25.11 फ्यूचीरस्टिक धारावाहिक

25.12 सारांश

25.13 निबंधात्मक प्रश्न

25.0 उद्देश्य

आलेख यानि स्क्रीप्ट किसी भी टेलीविजन कार्यक्रम की आधार शिला है, जिस पर पूरी की पूरी इमारत खड़ी होती है । चाहे उस की लम्बाई 10 सेकण्ड की हो या आधा घंटे की या फिर वर्षों तक चलने वाले सोप आपेरा की । यह आलेख ही है जो सबको बांधकर रखता है और कार्यक्रम की सफलता का कारण बनता है । इसीलिए आलेख का महत्व एवं उसकी बारीकियों को समझाना किसी भी कार्यक्रम निर्माता के लिए जरूरी होता है ।

आलेख की सफलता और उसकी महत्ता का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि 'शोले फिल्म' के संवाद के कैसेट सफल हिन्दी फिल्म के गीतों की तरह सामूहिक उत्सव के अवसर पर बजाएं जाते थे । इसलिए टेलीविजन कार्यक्रम निर्माण में भी आलेख के स्वरूप, प्रकार एवं इसकी आवश्यकता को समझना बेहद जरूरी है । एक तरह से टेलीविजन कार्यक्रम निर्माण का ककहरा आलेख से ही शुरु होता है ।

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप जान सकेंगे-

- आलेख (स्क्रिप्ट) किसे कहते हैं? आलेख का टेलीविजन में क्या महत्व है?

- आलेख एवं लेखक की क्या स्थिति है? टेलीविजन माध्यम में लेखक का महत्व दिन पर दिन कैसे बढ़ता जा रहा?
- टेलीप्ले एवं स्क्रीन प्ले किसे कहते हैं?
- टेलीविजन के लिए जो आलेख लिखे जाते हैं, वे कितने प्रकार के होते हैं? इनकी प्रमुख विशेषताएं क्या हैं?
- टेलीविजन समाचार एवं वृत्त चित्र की अवधारणा एवं स्वरूप से आप परिचित हो सकेंगे।
- आप एक सफल आलेख- लेखक बन सकेंगे । साथ ही आलेख-लेखन विधा से भली भांति परिचित हो सकेंगे ।

25.1 प्रस्तावना

टेलीविजन विधा इलेक्ट्रानिक माध्यमों में रेडियो एवं फिल्म के बाद की विधा है । इसीलिए कलात्मक एवं तकनीकी दृष्टि से इनका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है । इसलिए आलेख लेखन में भी इनका प्रभाव देखा जा सकता है । संवादों पर रेडियो तथा कैमरे की तकनीक में फिल्म का हू बहू प्रभाव है जबकि बारीकी से अध्ययन करें तो इनका प्रभाव होते हुए भी यह माध्यम इन दोनों से भिन्न है । संवाद जरूर है किन्तु हू बहू रेडियो के संवाद दर्शकों को बोझिल करते हैं । उसी प्रकार लांग शाट या मिड शॉट के एंगिल से लिखे गए आलेख इतने प्रभावी नहीं होते क्योंकि टेलीविजन को क्लोजअप का माध्यम माना जाता है ।

असल में यह विधा रेडियो के संवादों एवं कैमरे के कोणों के बीच एक संतुलित रिश्ता निर्धारित करती है । यदि संवादों के गठन और संरचना पर अधिक ध्यान दिया जाता है तो कैमरे की भूमिका लगभग नगण्य हो जाती है और कैमरा एक मूक दर्शक की तरह केवल संवादों को रिकार्ड करता रहता है । ठीक इसके विपरीत जब कैमरे को गति दी जाती है तो उसके अनुरूप संवाद न लिखे जाने पर दर्शकों को इसका प्रभाव अटपटा लग सकता है । इस स्थिति में अच्छा आलेख उसे माना जाएगा जो कैमरे एवं कलाकार या किसी भी सब्जेक्ट के बीच के रिश्ते को संतुलित ढंग से प्रस्तुत कर सके । आलेख का इस्तेमाल विजुअल्स की संवेदनशीलता को बढ़ाने के लिए किया जाना चाहिए जिसे कैमरे की कलम से लिखा जा रहा है । उसके द्वारा छोड़ी गई खाली जगहों को ही शब्दों से भरा जाना चाहिए ।

दूसरे शब्दों में कहा जाएं तो आलेख और कैमरे के बीच का संबंध अंधे और लंगड़े की दोस्ती जैसा होना चाहिए कि दोनों एक दूसरे का पूरक बनकर एक सशक्त टी.वी. कार्यक्रम तैयार कर सकें । इसीलिए यह तय है कि टेलीविजन के लिए कुछ भी लिख देना आलेख नहीं माना जा सकता । श्रेष्ठ आलेख या पटकथा उसे कह सकते हैं जो मौलिक रूप से कैमरे की भाषा को सशक्त बनाने में उसकी मदद करने के लिए लिखा गया हो । उदाहरण के लिए निम्नलिखित दृश्यों को दो तरह के संवादों से लिखा जा सकता है-

1. दृश्य एक-सुबह का समय 1 मोहन अपने बगीचे में टहल रहा है । उसका नौकर टहलते हुए देख रहा है । तभी उसकी नजर अचानक एक रेंगते हुए सांप पर पड़ती है जो मोहन के पांव की तरफ बढ़ा जा रहा है । तभी मोहन का नौकर जोर से चिल्लाने लगता है । अरे मोहन

बाबू.....भागिए जल्दी । वह सांप आपकी ओर चला आ रहा है । जल्दी कीजिए....." मोहन का यह संवाद रेडियो आलेख की दृष्टि से उपयुक्त हो सकता है किन्तु जब यह दृश्य टी.वी. के लिए लिखा जाएगा तो उस का स्वरूप कुछ इस प्रकार होगा-

2. दृश्य एक-कैमरा लांग शॉट पर मोहन को बगीचे में टहलते हुए कवर करता है । जूम इस शाट में मोहन का नौकर भी शामिल है जो मोहन को टहलते हुए देख रहा है ।

मोहन के नौकर का रिएक्शन शॉट/मोहन के पैर का क्लोजअप, मिडशाट पांव से दूर एक सांप रेंग रहा है । मोहन के नौकर का क्लोज अप । कट सांप का क्लोजअप । कट मोहन के पांव का चलते हुए क्लोज ! मिडशॉट नौकर और सांप । नौकर जोर से चिल्लाता है । मालिक सांप............कट । मोहन रुक जाता है । यदि इन दृश्यों को मोटे तौर पर गौर करें तो पाएंगे एक ही कलम से रेडियो के लिए लिखा गया है जब कि दूसरा उसी कलम से कैमरे के लिए लिखा गया है । दोनों दृश्यों में शब्द हैं किन्तु पहले दृश्य में शब्दों की प्रधानता है जिस में श्रव्य तत्व को प्रधानता दी गई है । दूसरे में दृश्य है जिस में दृश्य तत्व को प्रधानता देने के लिए शब्दों का इस्तेमाल किया गया है ।

25.2 टेलीविजन आलेख एवं लेखक की स्थिति

यह अजीब सी विडम्बना है कि टेलीविजन में पटकथा लेखन जितनी कलात्मक विधा है उस अनुरूप से इसे समझने की कोशिश नहीं की गई । इसलिए आज जब टी.वी. माध्यम पाश्चात्य एवं सम्बद्ध देशों के लिए एक आउट डेटेड इलेक्ट्रानिक खिलोने के रूप में संग्रहालय की वस्तु बनने जा रहा है । भारत जैसे विकासशील और गरीब देशों में आज भी बजाएं इसके तंत्र और विधा की वास्तविकता को समझने के, इसके ग्लैमर से प्रभावित हो रहे हैं । इसकी चकाचौंध एवं जादुई प्रभाव ने, गरीब देश की जनता को इस हद तक आकर्षित कर लिया कि इसके मूल स्वरूप को समझने का अवसर ही नहीं मिला । दूरदर्शन के माध्यम से (क्योंकि 1997 तक देश में इसका एकाधिकार रहा) जो कुछ भी टी.वी. संस्कृति के नाम पर दिया उस पर रेडियो की भाषा शैली और गुरुता एवं फिल्म तकनीक का प्रभाव छाया रहा । उद्घोषणा एवं कंपेयीरंग की शैली आज भी दूरदर्शन की उतनी ही पुरानी है जितनी रेडियो की है । 'तो आइए', हम आप को लिए चलते हैं । तो आइए हम देखते हैं...तो लीजिए प्रस्तुत है अब आप के सामने....जैसे वाक्य आज भी बेमानी है किन्तु परम्परा को तोड़ने में डर लगता है क्योंकि इसके स्थानापन्न शब्दों का इस्तेमाल करने से घबराहट होती है । इसके लिए अनुभव और विधा की जानकारी भी जरूर होती हे ।

विशेषकर दूरदर्शन के संबंध में यह कहना गलत नहीं होगा कि आलेख या इसके लेखक को सबसे ज्यादा गैर जरूरी माना गया है । अब तो दूरदर्शन केन्द्रों पर इन पदों पर बहाल 'स्क्रिप्ट राईटर' की जरूरत को ही समाप्त कर दिया गया है । आश्चर्य यह है कि जैसे-जैसे टेलीविजन का विस्तार हुआ वैसे-वैसे इस की जरूरत केन्द्रों पर समाप्त होती गई । यही कारण है कि अपवाद स्वरूप ही किसी संगीत या नृत्य के कार्यक्रमों में आलेख का कैप्शन आपने देखा होगा। दूरदर्शन का यह दुष्प्रभाव निजी चेनलों पर भी देखा जा सकता है । शायद ही किसी आलेख के अनुसार (टेलीप्ले को छोड़कर) टी.वी. के कार्यक्रमों की रिकार्डिंग की जाती है । पैसा

बचाने की दृष्टि से आलेख (स्क्रिप्ट) लेखन की जिम्मेवारी संचालकों एवं उद्घोषकों के ऊपर डाल दी गई जिससे व्यावसायिक रूप से अच्छे आलेख लेखकों की पीढ़ी को पनपने का अवसर नहीं मिला ।

टेलीविजन जैसे माध्यम में लेखन का अपना एक विशेष महत्व है । प्रमुख पटकथा लेखक कमलेश्वर का इस संदर्भ में मानना है 'लेखक के बिना टेलीविजन जैसा माध्यम नहीं चल सकता । लेकिन यह बड़ी त्रासदी है टेलीविजन की कि यहां लेखकों के ब्रांड नेम नहीं बन पाए । अगर एकाध लोगों को छोड़ दें तो नहीं बना । उसका मूलरूप से कारण यही है कि यहां पर व्यावसायिक रूप से सफल हो सकने की निर्माताओं में अधिक होड़ है । तो ठीक है हमारा इससे कुछ जाता नहीं है । लेकिन वगैर लेखक के किसी सीरियल निर्माता का काम नहीं चल सकता । लेकिन, लेखक में भी बहुत कुछ होना चाहिए' । (टेलीविजन लेखन, पृष्ठ 7)

मनोहर श्याम जोशी ने टेलीविजन माध्यम में लेखक के महत्व को प्रतिपादित करते हुए कहा है-'टेलीविजन का माध्यम फिल्म की अपेक्षा बहुत अधिक शब्द प्रधान है । इसमें दिग्दर्शक, कैमरामैन, संपादक, साउंड रिकार्डिस्ट वगैरह के लिए कर दिखाने के विशेष कुछ नहीं होता । दर्शकों को बांधे रखने का सारा दारोमदार लेखक की कलम के कमाल पर ही है । भारतीय टेलीविजन में भले ही अब तक फिल्मों की तरह निर्माता और दिग्दर्शक को ही महत्व दिया जा रहा हो लेकिन पाश्चात्य देशों में धारावाहिक लेखन के क्षेत्र में लेखक की भूमिका ही केन्द्रीय मानी जाती है । वहां धारावाहिकों के निर्माता खुद लेखक ही होते हैं । (टेलीविजन लेखन) ।

असगर वजाहत के शब्दों में- 'टेलीविजन की विकास यात्रा ने टेलीविजन के लिए लेखन का महत्व बढ़ाया है । पहले सिर्फ फिल्म उद्योग ही था जहां व्यावसायिक लेखन के लिए लेखक जुड़ते थे । टेलीविजन आज फिल्म उद्योग के मुकाबले में उठ खड़ा हुआ है और लेखकों को एक ओर 'ग्लैमरस' मुकाम मिल गया है । 'हमलोग' के प्रसारण ने लेखकों को एक नई राह दिखाई । धीरे- धीरे लेखकों के लिए रास्ते खुलने लगे । धारावाहिकों की संख्या बढ़ने लगी । 'हमलोग' से जहां 'सोप आपेरा' शब्द का प्रचलन हुआ, तो 'ये है जो जिन्दगी' और 'कक्काजी कहिन' के साथ 'सिरकाम' शब्द का प्रचलन दुआ । 'करमचंद' के प्रसारण ने जासूसी धारावाहिकों का रास्ता खोला। इसके अलावा अलग-अलग तरह के समाजों और परिवारों पर केन्द्रित धारावाहिकों का प्रचलन हुआ'।

इसके अतिरिक्त 'कब तक पुकारू,' 'मैला आंचल', 'राग दरबारी' सहित बंगला उपन्यासकार शरतचन्द्र के उपन्यासों, श्रीकान्त', 'चरित्रहीन' सहित कई प्रसिद्ध उपन्यासकारों के उपन्यास भी दूरदर्शन के लिए धारावाहिक बने । साठ और सत्तर के दशकों में जहां धारावाहिक उपन्यास छापने का काम 'धर्मयुग', 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' जैसी पारिवारिक पत्रिकाओं ने किया था, अस्सी के दशक में वही काम टेलीविजन ने किया । लेखकों का पाठक-संसार बढ़ा । 'तमस' और 'मालगाड़ी डेज' की सफलता इसके उदाहरण हैं । (टेलीविजन लेखन, पृष्ठ 20)

25.3 टेलिप्ले / टेलीफिल्म

कई समीक्षकों ने टेलीविजन कार्यक्रमों में टेलिप्ले की जगह टेलीफिल्म शब्द का भरपूर इस्तेमाल किया है जो टी.वी. की प्रकृति के अनुरूप नहीं है । जो कार्यक्रम इ.एन.जी. कैमरे या किसी भी प्रकार के वीडियो कैमरे के साथ बनाए जाते हैं उन्हें फिल्म से जोड़ना तार्किक एवं व्यावहारिक रूप से उचित नहीं है । क्योंकि वीडियोग्राफी से फिल्म विधा का किसी भी प्रकार का संबंध नहीं है । फिल्म का आप्टिकल या निगेटिव प्रिंट, इ.एन.जी. के टेप से बिलकुल ही अलग होता है । आज भी विश्व के अन्य चैनलों द्वारा प्रसारित वीडियो कैमरे द्वारा रिकार्ड कार्यक्रमों में फिल्म का नाम नहीं जुड़ता बल्कि उसकी जगह टेलिप्ले का नाम आता है जो हर दृष्टि से उचित है । उसी प्रकार स्क्रीन प्ले शब्द है जो किसी फिल्म के लिए जितना आवश्यक तत्व माना जाता रहा है उसका चौथाई भी 'स्क्रीन प्ले' से टी.वी. के परदे को लेना देना नहीं है । अपवाद स्वरूप महाभारत, रामायण या चाणक्य जैसे किसी धारावाहिक के लिए 'स्क्रीन प्ले' लिखा गया होगा किन्तु व्यावहारिक जीवन में टी.वी. कार्यक्रमों के लिए स्क्रीन प्ले की आवश्यकता नहीं होती । वैसे भी स्क्रीन शब्द का सही संबंध सिनेमा हाल के परदे से ज्यादा है और टेलीविजन के स्क्रीन से कम है ।

यहां पटकथा से ज्यादा उपयुक्त आलेख कहना ही रहेगा क्योंकि पटकथा का कैनवास 70 एम.एम. से लेकर 35 एम.एम. तक की विराटता समेट लेता है जबकि साधारण स्तर पर टी.वी. का परदा 61 से.मी. तक सिमटकर रह जाता है । पटकथा में कैमरे के लिए काफी स्कोप बना रहता है जब कि टेलीविजन आलेख में सभी कलात्मक रूपों में कैमरा सिर्फ क्लोजअप में बांध दिया जाता है । टी.वी. को क्लोजअप का माध्यम कहा जाता है । इसका तात्पर्य यह हुआ कि इसमें मिड क्लोजअप का भी वैसा स्थान नहीं है । क्लोजअप के बाद मात्र एक ही शॉट बी.सी.यू. (बिग क्लोजअप) ही बचा रहता है । जिसमें कैमरे की गतिशीलता बिल्कुल बन्द हो जाती है । ऊपर नीचे या दाएं-बाए करना नितान्त असंभव होता है । यदि आप कैमरे की इस मूवमेंट को ध्यान में नहीं रखेंगे तो संभव है जो आलेख तैयार कर रहे हैं उसके संवाद इस एंगिल पर नहीं फब पाए । इसीलिए टी.वी. के लिए आलेख लिखना उतना आसान नहीं है जितना समझा जाता रहा है । इस संदर्भ में स्टार टी.वी. पर प्रसारित होने वाले दो धारावाहिकों का जिक्र करना आवश्यक है जिसे गौर से देखें तो टेलीविजन के तकनीक के मद्देनजर संवाद लिखे और इसकी रिकार्डिंग की जाती है । इन दो धारावाहिकों का नाम है 'द बोल्ड एण्ड द ब्यूटिफुल' एवं 'सान्ताबारबरा' । इन दो धारावाहिकों में सब से ज्यादा क्लोजअप एवं बी सी.यू. का इस्तेमाल किया गया है, जबकि ठीक इसके विपरीत कई-कई धारावाहिकों में तो कैमरा लोग शाट पर स्थिर रहता है और कलाकार आते-जाते रहते हैं । कभी-कभी कैमरा जूमइन या क्लोजअप से फास्ट जूम आउट हो जाता है । अब ऐसे कार्यक्रमों के लिए पटकथा या टी.वी. पटकथा की जरूरत ही नहीं रह जाती।

25.4 टेलीविजन आलेख के प्रकार

टेलीविजन आलेख को चार भागों में बाट सकते हैं । 1. सोप आपेरा, 2. ऐतिहासिक, 3. धार्मिक एवं थिलर, 4. टी.वी. समाचार एवं वृतचित्र । पहले प्रकार में हम धारावाहिक कार्यक्रमों को ले सकते हैं, जिनमें नाटकीय तत्व एवं भंगिमाओं की प्रधानता होती है । धारावाहिकों के भी कई रूप होते हैं ।

25.4.1 सोप आपेरा

कुछ तो टेलीविजन कार्यक्रम प्रतिदिन दिखाए जाते हैं जिन्हें सोप आपेरा की श्रेणी में रखा जाता है । कुछ साप्ताहिक के रूप में दिखाए जाते हैं । सोप आपेरा की खूबसूरती यह है कि यह धारावाहिक वर्षों-बरस टी.वी. पर किसी परिवार के इर्द गिर्द घूमती हुई कहानी का हिस्सा होती है जो उनके जीवन की यथार्थता को समय के साथ दिखलाते चलते हैं । इस चक्र में कई अभिनेता तो उसी कार्यक्रम के साथ बचपन से जवान और जवान से बूढ़े हो जाते हैं । इनके प्रतिदिन की संवेदनाओं को दर्शकों तक पहुँचाते रहते हैं । उसी प्रकार उस धारावाहिक के निर्देशक एवं लेखक-तकनीशियन सभी बदलते रहते हैं और यह प्रतिदिन दिखाया जाता है । जबकि साप्ताहिक धारावाहिकों की घटना को संयोजित रूप से दिखलाया जाता है जिसमें भटकने की गुंजाइश लेखक के लिए नहीं बचती ।

'शांति' देश का पहला सोप धारावाहिक था जबकि 'हम लोग' पहला साप्ताहिक धारावाहिक के रूप में रेखांकित किया जा सकता है । हालांकि विदेशी सोप धारावाहिकों की तुलना में ज्यादा वर्षों तक 'शांति' का प्रसारण चल नहीं पाया । क्योंकि इसकी सोच एवं कथानक की धरातल आयातित थी । 'सोप-आपेरा ' विधा का श्रीगणेश मैक्सिको, पेरू जैसे लेटिन अमेरिकी देशों से माना जाता है । सन् 1950 तक 'सोप आपेरा' रेडियो पर ही आते थे, पर इसके बाद बढ़ते उपभोक्तावाद ने इसे टेलीविजन की सफलतम विधा के रूप में स्थापित किया । उसके बाद अमेरिकी टेलीविजन ने उसे बाजार के सबसे बिकाऊ माल के रूप में स्थापित किया । प्रसिद्ध लैटिन अमरीकी उपन्यासकार मारियो वगसि लहोसा ने अपने प्रसिद्ध उपन्यास 'आट जूलिया एण्ड द स्क्रिप्ट राइटर' में लैटिन अमरीकी देशों में रेडियो सोप-आपेराओं की लोकप्रियता का बहुत ही अच्छा खाका खीचा है और यह भी बताया है कि उनके लेखकों की प्रतिष्ठा समाज में हीरो की तरह होती है ।

भारत में 'हमलोग' को पहला सोप-आपेरा माना जाता है और उसके परिवारों के साथ भारतीय जनमानस की संवेदना के जुड़ जाने के कारण भी इसकी सोप-आपेरा की कोटि में डाल दिया गया है । 'हमलोग' की सफलता के पीछे सबसे बड़ा कारण उसका पहला धारावाहिक होना ही माना जाना चाहिए ।

दूरदर्शन पर जब से प्रायोजित कार्यक्रमों का दौर शुरु हुआ, धीरे- धीरे भारतीय आम परिवार टेलीविजन के पर्दे से गायब होने लगे और उनकी जगह बड़े औद्योगिक घरानों की टक्कर, टूटते-बिखरते परिवार, वैधता की मांग करते अवैध संबंध सामने आने लगे । दूरदर्शन

पर दिखाई गई अपने जमाने की सबसे लोक प्रिय प्रेम कहानी 'फिर वही तलाश' के छुप- छुपकर मिलने वाले प्रेमी-प्रेमिका धीरे-धीरे पीढ़ी के रोज बदलते रोमांस में बदल गया ।

वास्तव में टेलीविजन का बड़ा दर्शक वर्ग आज भी आम मध्य वर्ग ही है । लेकिन टेलीविजन को संचालित करने वाली शक्तियां कनवेट और सैट स्टीफेंस कालेज जैसी जगहों से पढ़-लिखकर बाजार में कम कर रही है । ये ही वे लोग हैं जो बाजार में बैठकर 'साफ्टवेयर' देखते हैं और यह तय करे हैं कि कौनसा कार्यक्रम सफल होगा और किसमें पैसा लगाना चाहिए? जाहिर है जिस परिवार, समाज कि कहानी, उन्हें समझ में नहीं आती तो उसके लिए वे यह कहते हैं कि इसे कौन समझेगा? यानि जिसे ये नहीं समझते, उसके लिए ये मान लेते हैं कि इसे समझने वाला कोई भी नहीं है । हम यह कह सकते हैं कि इस तरह के 'सोप आपेरा' बाजार द्वारा थोपे गए हैं - भारतीय दर्शक वर्ग पर ।

लेकिन यह भी यथार्थ है कि इस तरह के कार्यक्रम लोकप्रिय भी खूब हुए । 'स्वाभिमान' इसका उदाहरण है । लेकिन इस प्रकार का पहला सोप आपेरा 'खानदान' नहीं चल पाया । फिर आया 'बुनियाद' अतीत और वर्तमान का अद्भुत संगम था । इसमें और पीढ़ी दर पीढ़ी चलने वाली इस कहानी ने 'सोप आपेरा' का सूत्र दिया भारतीय निर्माताओं, लेखकों को । इस धारावाहिक ने यह बताया कि 'सोप आपेरा' की कहानी में ऐसे सूत्र होने चाहिए जो कभी खत्म न हों । बिल्कुल उसी तरह बढ़ती चलें जैसी कि कथावाचकों की कहानी चलती हैं ।

'बुनियाद' के बाद इस तरह की कहानियों का फिल्मांकन टेलीविजन के लिए बढ़ता गया । आरम्भ में 'सोप आपेरा' हफ्ते में एक बार दूरदर्शन पर दिखाए जाते थे आधे घंटे के लिए । फिर बाद में ये हफ्ते में दो बार दिखाए जाने लगे । बाद में जब दूरदर्शन का दोपहर का कार्यक्रम शुरु हुआ तो 'डेली सोप' शुरु हुए । यानि रोज-रोज दिखाए जाने वाला धारावाहिक । 'शांति' इसी तरह का पहला धारावाहिक था ।

धीरे-धीरे प्राइवेट चैनलों पर 'सोप आपेराओं' की धूम मच गई । देश के पहले हिन्दी चैनल' जी टी.वी. पर इस तरह के धारावाहिकों की बाढ़ आ गई । 'तारा' जी टी.वी. का सफलतम 'सोप आपेरा' है । (टेलीविजन लेखन, पृष्ठ 28)

25.4.2 ऐतिहासिक

धारावाहिकों का एक प्रकार ऐतिहासिक धारावाहिकों का भी होता है जो किसी ऐतिहासिक काल खंड की कथाओं पर आधारित होता है । इस देश में रामायण, महाभारत से लेकर गुप्तकाल के चरित्रों चाणक्य एवं चन्द्रगुप्त तथा टीपू सुल्तान आदि पर आधारित धारावाहिक बनाए गए है, जिन्हें भारतीय टेलीविजन के दर्शक अपने छोटे परदे पर देख चुके हैं । जबकि हास्य धारावाहिकों को भी भारतीय दर्शकों ने काफी सराहा है । यह हास्य (कामेडी) धारावाहिकों का चलन 'ये जो है जिन्दगी' से प्रारम्भ हुआ है और अभी तक इसी शैली के हास्य धारावाहिकों के दर्शन हो रहे हैं ।

असगर वजाहत ने कामेडी धारावाहिकों का उल्लेख करते हुए लिखा है- 'भारतीय दूरदर्शन पर पहला कामेडी शो 'ये जो है जिन्दगी' को माना जाता है । हालांकि कार्यक्रम के मुताबिक पहला शो के पी. सक्सेना का लिखा हुआ 'बीवी नातियों वाली' माना जाता है । देश में जब प्राइवेट चैनलों की बाढ़ आ गई तो हर चैनल के सामने यह समस्या आई कि ऐसे 'साफ्टवेयर' कैसे विकसित किए जाएं कि विविधता बनी रहे क्योंकि हर चैनल पर लगभग एक ही तरह के कार्यक्रम आने लगे थे । तो ऐसे में 'सिरकाम' का एक नया रूप सामने आया । यह था कामेडी शो के साथ-साथ 'टाप-टेन दिखाने का । पहले दूरदर्शन ने 'आल द वेस्ट' नामक कार्यक्रम शुरु किया । इसी प्रकार जी टी.वी. पर आजकल दिखाया जा रहा धारावाहिक 'कोलगेट टाप टेन' भी इसी तरह का एक कार्यक्रम है और संभवत सर्वाधिक लोकप्रिय कामेडी शो भी है । इसी प्रकार जी टी.वी. का एक अन्य 'सिरकाम' जो कि बहुत लोकप्रिय हुआ वह है 'फिल्मी चक्कर' । इस प्रकार कामेडी का एक अन्य रूप भी है जो कि 'नुक्कड़' धारावाहिक से बना । इधर 'कामेडी शो' का एक रूप देखने में आया है वह है 'पैरोडी शो' का । कुछ हद तक इसकी शुरुआत हम 'फिल्मी चक्कर' से ही मान सकते हैं ।

हालांकि हास्य धारावाहिकों के लिए सिरकाम (सिचुएशन कामेडी) लिखना काफी मुश्किल काम है । इससे भारतीय परिवेश एक अजीब सा नकचढ़ा समाज को संरक्षण देता रहा है जहां हंसना एक स्तरहीन वाला काम माना जाता है । आप चाहें तो कत्ल कर दें किन्तु आप किसी को हंसाने का अधिकार नहीं रखते हैं । मनोवैज्ञानिक दृष्टि से बीमार परिवेश में स्वस्थ एवं हास्य रस की बहुत जरुरत है किन्तु आज भी तमाम धारावाहिकों का मुख्य केंद्र बिन्दु पत्नी, सास, बहु, ससुर और दामाद है । इनसे अलग किसी धारावाहिक का आलेख देखने को नहीं मिलता । बाद में 'मुंगेरीलाल के हसीन सपने' की लोकप्रियता ने 'सिरकाम' को इस माध्यम के लिये उपयुक्त बनाया। इसी प्रकार 'कक्काजी कहिन' बी.बी के लोकप्रिय धारावाहिक 'यस प्राइमनिस्टर' की तर्ज पर पहला राजनीतिक हास्य-व्यंग्य प्रधान 'सिरकाम' था ।

25.4.3 धार्मिक एवं थ्रिलर

हालांकि धार्मिक कथानकों एवं उपकथानकों पर धारावाहिक बनाए जाएं अथवा नहीं यह विवाद का विषय है । 'महाभारत', 'श्रीकृष्ण', ' ॐ नम: शिवाय,' 'शिव महापुराण', 'जय हनुमान' जय गणेश, विष्णु पुराण, महाशक्ति, जैसे पौराणिक कथाओं पर भी धारावाहिक बनाए गए हैं । हालांकि होना तो यह चाहिए था कि नए माध्यम की एवं विस्तार के लिए नए प्रकार के आलेख और नई भाषा की खोज की जाती किन्तु सबसे आसान धार्मिक रख पौराणिक कथाओं के साथ खिलवाड़ करना था । सो परम्परागत रूप में आलेख की यह शैली भी टी.वी. में काफी लोकप्रिय इसके अतिरिक्त थ्रिलर और जासूसी शैली के आलेख भी इसी के हिस्से हैं किन्तु इनके द्वारा जिस प्रकार की और अंध विश्वास और तर्कहीनता का जाल फैलाया जा रहा है । उसे अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को ध्यान में कुछ भी परोसने का अधिकार टेलीविजन को मिला हुआ है ।

थ्रिलर का अर्थ है अपराध कथाओं को आधार बनाकर बनाए गए धारावाहिक । ये धारावाहिक जासूसी श्रेणी ही रोमांचक होते हैं । इसमें एक फर्क यह है कि एक ही कहानी इसमें चलती रहती है । दूरदर्शन के मेट्रो चैनल दिखाया जा रहा 'राजा और रैन्वो' इसका एक अच्छा उदाहरण है । जी टी.वी. पर दिखाया जा रहा 'दास्तान' सफल 'थ्रिलर' है । थ्रिलर से मिलता जुलता है धारावाहिक है 'हारर' । स्टार प्लस पर चैनल के सफल धारावाहिक 'एक्स फाइल्स' की नकल पर भी कुछ धारावाहिक आए । आज कल सोनी टी.वी. पर 'आहट' दिखाया जा रहा जो कि एक मनोरंजन हारर धारावाहिक है । (टेलीविजन के लिए लेखन, पृष्ठ 32)

25.4.4 टी.वी समाचार एवं वृत्तचित्र

जैसाकि ऊपर टेलीविजन आलेख के बारे में जिक्र किया गया है कि आलेख का चाहे कोई भी रूप हो जिस कथात्मकता एवं अभिनय की प्रधानता है वे टेलीप्ले की श्रेणी में ही आते हैं । इसीलिए इसका फलक बहुत ही वि है । फिर भी इसका एक और महत्वपूर्ण पक्ष समाचार एवं वृत्त चित्रों के निर्माण से जुड़ा हुआ है । इसे दर्शक टी न्यूज एवं डाक्यूमेंट्री के रूप में ज्यादा जानते हैं । चूंकि टी.वी. समाचारों की भाषा पर आकाशवाणी और फिर पत्रक का प्रभाव पड़ने के कारण इसका सहज स्वरूप विकसित नहीं हो पाया, जबकि व्यावहारिक दृष्टि से समाचारों के अ की भाषा को विजुअल्स के समर्थन में व्यवहार करना चाहिए था, जिससे उसकी दक्षता प्रभावोत्पादकता बढ़ता किन्तु सम के शब्दों के पांडित्य और गरिष्ठता पर इतना जोर दिया गया है कि दृश्यों के सहज प्रभाव भी नष्ट हो गए हैं । 26 जनवरी या 15 अगस्त का 'आंखों देखा हाल' का दूरदर्शन से प्रसारण का स्मरण करें जो इस तरह सुनाई प 'मैं देख रहा हूँ भारत के जवानों के चेहरे अदम्य साहस और शौर्य के प्रतीक दिखाई पड़ रहे हैं और मौसम भी प्रसन्न होकर इनका हौसला आफजाई कर रहा है । मेरी दृष्टि जिधर भी जाती है सैकड़ों हाथ हवा में लहरा रहे हैं । जोश है, जुनून है । भारत को विश्व के सामने महान बनाकर रखने की ताकत है ।' जबकि इस कमेंट्री के साथ दृश्य दिखलाये जा रहे हैं संभव है इस से अलग हों और अलग होने की वजह से पूरा संवाद दर्शकों के लिए बे लग रहा हो । सब से हास्यास्पद स्थिति तो बड़े-बड़े चैनलों के समाचारों में 'उल्लेखनीय है' या 'कहा जाता है' शब्दों के प्रयोग से उत्पन्न हो जाती है । इसीलिये दूरदर्शन के आलेख की भाषा का स्वतंत्र विकास नहीं हो पा पहले रेडियो और बाद में प्रिन्ट मीडिया की भाषा का प्रभाव बढ़ता गया ।

टेलीविजन आलेख का एक स्वरूप वृत्तात्मक आलेख का होता है जिसे प्रचलित एवं व्यावहारिक शब्दों से डाक लेखन कह सकते हैं । इस प्रकार के लेखन में इतिहास और कल्पना का सही मिश्रण ही एक दर्शनीय आलेख का दे सकता है । यदि इन दोनों तत्वों में से किसी एक तत्व की भी अधिकता हुई तो आलेख के बोझिल होने का बना रहता है । वैसे भी दस्तावेजों की नीरसता को ऐतिहासिक संदर्भों में प्रस्तुत करना आसान नहीं है और सरस साथ तो बहुत ही कठिन है । सरसता का अभाव ही दर्शकों की संख्या घटने का प्रमुख कारण है । इसीलिए जब छ या टी.वी. के परदे पर डाक्यूमेंट्री का प्रसारण किया जाता है, तब आमतौर पर दर्शकों की रुचि घट सी जाती है । यदि कथावस्तु को नए रूप में एवं प्रभावशाली विजुअल्स के

साथ प्रस्तुत किया जाएं तो दर्शकों की कमी नहीं र आज भी 'नेशनल ज्योग्राफिकल चैनल' या 'डिस्कवरी चैनल' के दर्शकों की संख्या कम नहीं है ।

समाचारों की मात्रा दूरदर्शन के जमाने में सीमित होती थी । लेकिन आज दूरदर्शन में समाचारों को विशेष दिया जा रहा है । दूरदर्शन का 'आज तक' 24 घंटे का सूचना प्रधान चैनल इसका एक उदाहरण है । दूरदर्शन सभी चैनलों पर समाचारों की मात्रा में वृद्धि हुई है । स्टार टी.वी. नेटवर्क ने भी 'स्टार न्यूज' नामक चैनल 1 शुरु कर दिया था जो अभी भी चल रहा है । इसी तरह समाचार आधारित कार्यक्रम भी होते हैं जैसे दूरदर्शन के दिनों में 'ताना-बाना' नाम की संस्कृति पत्रिका दिखाई जाती थी । 'सुरभि' एक और कला-संस्कृति पत्रिका है, तो 'साप्ताहिक आज तक' जैसे समाचार पत्रिकाएं भी दिखाई जाती रही हैं ।

समाचारों के संदर्भ में हर चैनल की अपनी भाषा है । इसी कारण समाचार और समाचार विश्लेषण लिखने के क्रम उस चैनल की भाषा नीति को ध्यान में रखना आवश्यक होता है ।

25.5 टी.वी. आलेख की भाषा

इस संदर्भ में खासकर दर्शकों की दिलचस्पी बनाए रखने के लिए जरूरी है कि आलेख संवाद जिसे कमेंट्री कहा जाता है बहुत ही सीधे सादे एवं सहज हो और दर्शकों के सामने दिखाए जा रहे विजुअल्स के प्रभाव को द्विगुणित करते हैं । किन्तु आमतौर पर भारतीय डाक्यूमेंट्री निर्माण में शायद ही आलेख के आधार पर शूटिंग की जाती है । बहुत ही कम निर्माता इस प्रक्रिया से निर्माण करते हैं । आमतौर पर विजुअल्स को देखकर आलेख तैयार करवाए जाते हैं और आलेख हो विजुअल्स की उपलब्ध सामग्री के अनुरूप बनाया जाता है । कभी-कभी तो लेखक की मात्र डोपशीट के आधार ही आलेख तैयार करना पड़ता है ।

25.6 टाक शो का आलेख

इसके अतिरिक्त टेलीविजन की विधा ने अभिव्यक्ति के लिए रेडियो एवं फिल्म माध्यम से स्वतंत्र होकर एक नई शैली का आविष्कार किया है । असगर वजाहत ने टाक शो एवं टेलीविजन के विविध कार्यक्रमों की भाषा पर अपने विचार यों व्यक्त किए हैं- 'टाक शो एवं अन्य कार्यक्रमों में कई प्रकार से लेखन किया जाता है । यह ज्यादा निर्भर उस कार्यक्रम पर करता है, यानि उसका दर्शक वर्ग क्या है? उसका प्रस्तुतकर्ता कौन है? एक सफल लेखन बनने के लिए यह जरूरी नहीं कि आप हिन्दी भाषा में पारंगत हों, बल्कि अपमार्केट हिन्दी की आपको कितनी जानकारी है । ऐसे में आपको दिल्ली विश्वविद्यालय के 'कैम्पस' की भाषा को ध्यान में रखना चाहिए, उन जैसों की बातचीत को ध्यान से सुनना चाहिए । और अगर इसका अवसर नहीं मिल पाए तो इस तरह के कार्यक्रमों की भाषा को ही ध्यान पूर्वक देखना चाहिए' ।

इसी तरह विविध कार्यक्रमों के लेखन के क्रम में इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि वह कार्यक्रम किस चैनल पर प्रसारित होने वाला है । हर चैनल की अपनी एक भाषा होती है।

25.7 विज्ञापन

टेलीविजन के विस्तार के साथ ही आप देखेंगे कि विज्ञापन विधा की गतिविधियां भी असाधारण रूप से बढ़ गई हैं । इसका सीधा मतलब यह भी है कि टेलीविजन का प्रत्यक्ष संबंध आर्थिक-बाजार से जुड़ा हुआ है । जैसे-जैसे समाज में उत्पाद वस्तुओं की सीमाए व्यापक हुई हैं, उसी प्रकार उपभोक्ता समाज में भी बढ़ोतरी हुई है । पहले उत्पादों के विज्ञापन सिनेमाघर के दर्शकों को ध्यान में रखकर तैयार किए जाते थे । किन्तु अब वीडियो कैमरे के द्वारा टी.वी. दर्शकों को एक बहुत बड़े भाग के लिए विज्ञापन बनाए जाते हैं ।

इस प्रकार विज्ञापन के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन होने के कारण विज्ञापनों के लिए आलेख तैयार करने की मांग भी बढ़ी है । किन्तु विज्ञापन के लिए आलेख तैयार करना गागर में सागर भरने जैसा दायित्व है जो कठिन कार्य है । कम से कम शब्दों, ज्यादा से ज्यादा प्रभावशाली विजुअल्स एवं इसके अनुरूप तेज एवं आक्रमक गति से कैमरे का इस्तेमाल रख ध्वनि संगीत के आकर्षक प्रयोग से उपभोक्ताओं को रिझाने के लिए जरूरी होता है । हालांकि विज्ञापन पहले भी तैयार किए जाते थे लेकिन अब कम्प्यूटर के प्रभाव से इसे और भी अधिक चमत्कृत करने वाले दृश्यों से भरपूर बनाया जा सकता है ।

25.8 पाश्चात्य संगीत

पाश्चात्य संगीत में वीडियो एलबम बनाने की तकनीक ने भारतीय निर्माता निर्देशकों को भी प्रभावित किया है, जिस में कम्प्यूटर ग्राफिक्स एवं डिजिटल प्रभावों से एक नई मोहक दुनिया की रचना की जा सकती है । आमतौर पर टी.वी. कार्यक्रम को नाटक से अभिनय तत्व, रेडियो से संवाद अदायगी और फिल्म से छायांकन के तत्व का मिला जुला रूप माना जाता है । किन्तु संगीत के क्षेत्र में कम्प्यूटर के सहयोग से इस विधा में अभूतपूर्व क्रांति आई है । जिसकी संभावनाओं से विश्व का दर्शक चमत्कृत है । कैमरा, ध्वनि, प्रकाश एवं संगीत का ऐसा अद्भुत संयोजन है जिसे इस माध्यम की श्रेष्ठ मौलिक उपलब्धि के रूप में रेखांकित किया जा सकता है। इस विधा के बाजार ने आलेख की जरूरत को एक नया स्वरूप दिया है । जिसका स्वरूप परम्परागत प्रभावों से हटकर है, जिसे कैमरे के प्रति फ्रेम की गति की जरूरत होती है । जबकि टी.वी. की धारावाहिकों में आलेख की गति इतनी तेज नहीं होती है ।

कई लेखक यह मानते हैं कि टेलेविजन धारावाहिकों में दृश्य भले ही ज्यादा न हो किन्तु संवादों का ज्यादा से ज्यादा इस्तेमाल किया जाना चाहिए । धारावाहिकों में कैमरे के मूवमेंट की ज्यादा जरूरत नहीं होनी चाहिए । इन लेखकों के अनुसार कलाकार और कैमरे के बीच संवाद की प्रधानता होनी चाहिए । निर्देशक के बिना भी धारावाहिकों का निर्माण संभव है । इनके अनुसार कलाकार कैमरे के सामने यदि संवादों की अदायगी होती रहे और कैमरा आन रखा जाय तथा कलाकार दनादन एक दूसरे पर संवादों को गोलियों की तरह एक दूसरे पर इस्तेमाल करता चला जाएं । यह टी.वी. माध्यम की लोचदार प्रकृति का परिणाम है कि पहले इसका उपयोग रेडियो की तरह किया जाता रहा और अब अखबार की तरह होने लगा है ।

29.9 थीम

आलेख का प्रारूप चाहे जैसा हो थीम उस की आत्मा होती है । हर प्रकार के आलेख की एक थीम होती है । यहां तक कि यदि 30 या 10 सेकण्ड के स्पाट भी लिखे जाते हैं तो उसमें एक थीम होती है, जिसके गिर्द विज्ञापन की रचना की जाती है । इसी थीम को अभिव्यक्ति देने के लिये पूरा नाटक रचा जाता है । यह थीम एक तरह से देखा जाएं तो पूरे नाटक का बौद्धिक तत्व होता है । यदि पूरे आलेख में लेखक को यह भी पता न हो कि आखिर उसके लिखने का मतलब क्या है तो वह लेखन बेमानी हो जाता है ।

यह थीम भी मुख्यत: दो रूपों में लेखक के पास उपलब्ध होते हैं या तो किसी प्रकार के संदेश के रूप में या किसी विचार के रूप में जिसे केन्द्रित कर एक घंटे, आधा घंटे या इससे ज्यादा घंटों का ताना बाना बुना जाता है । यहां तक कि सोप धारावाहिकों में भी एक थीम होती है जिसका संबंध दिन प्रति दिन की नाटकीय घटनाओं से जुड़ा रहता है । आलेख का पूरा तानाबाना ही थीम की अभिव्यक्ति के लिए रचा जाता है । यह बात अलग है कि दर्शकों को उससे किस हद तक प्रभावित किया जा सकता है और इसे सफलता से अभिव्यक्ति देने के लिए किस प्रकार की तकनीक का सहारा लिया जाता है । क्योंकि एक ही थीम पर दर्जनों टेलीविजन के कार्यक्रम बनाए जा सकते हैं और दर्जनों के प्रभाव दर्शकों को अलग-अलग तरीकों से प्रभावित कर सकते हैं ।

25.10 आलेख एवं दृश्य का संबंध

आलेख का प्रारूप तैयार करने से पहले किसी आलेख के तत्वों को समझना जरूरी होता है क्योंकि किसी भी कार्यक्रम के निर्माण से पूर्व आलेख पहली शर्त होती है । उस आलेख की सफलता इस तथ्य पर निर्भर करता है कि उसका संबंध उसकी दृश्यात्मकता के साथ कितना गहरा जुड़ा हुआ है । यदि ऐसा नहीं है तो कैमरे के सामने आकर कुछ भी कह देने से दर्शकों पर प्रभाव नहीं पड़ता । इसलिए आलेख के प्रारूप तैयार करते समय शब्द एवं दृश्य के आन्तरिक संबंधों का निर्वाह भी जरूरी होता है । ऐसा भी नहीं लगे कि कलाकार जब रो रहा है तो उसके चारों ओर हरियाली हो और रंगबिरंगे फूल खिले हों या जब हंस रहा हो या प्रसन्न हो तो उसके पार्श्व में ठूंठ पेड़ या रेत ही रेत दिखलाई पड़े । इसलिए इनके बीच के नाजुक संबंधों का ध्यान रखना उचित है 1

25.11 फ्यूचरिस्टिक धारावाहिक

आलेख के प्रकार को तय करते समय इसके फ्यूचरिस्टिक धारावाहिकों के बारे में भी उल्लेख करना जरूरी है । आज से लगभग 10 वर्षों पूर्व टेलीविजन पर एक सफल अंग्रेजी धारावाहिक 'स्टार ट्रैक' का प्रदर्शन किया जा रहा था जिस में एक यान के अन्तरिक्ष में सैर करने के दौरान कई अन्य ग्रहों के लोगों से मुलाकात, संघर्ष एवं विजय की कहानी कही गई थी । आज चूंकि वीडियो तकनीक एवं कम्पयूटर की अनंत संभावनाओं ने एक से बढ़कर एक खर्चीले फ्यूचरिस्टिक धारावाहिकों का प्रसारण किया है । जिस में किसी भी प्रकार के असंभव को आसानी से संभव किया जा सकता है । स्पेशल इफेक्ट्स के द्वारा तैयार किए गए धारावाहिकों

में मनोरंजन की अचूक क्षमता है जिससे दर्शक प्रति दिन रूबरू हो रहा है और जो अब तक रेडियो, नाटक एवं फिल्मों में असंभव लग रहा था । इस दिशा में टेलीविजन ने अपनी संभावनाओं के ऐसे द्वार खोल दिए हैं जो अब तक विशेषज्ञों के लिए अपरिचित थे और संभावना यह है कि टेलीविजन माध्यम से कई ऐसी गुप्त संभावनाओं से साक्षात्कार हो सकेगा जिसकी लेखक ने कल्पना तक नहीं की होगी ।

25.12 सारांश इकाई

यदि आलेख से जुड़े तथ्यों और टी.वी. कार्यक्रमों के निर्माण में इसकी व्यावहारिकता को देखें तो पाते हैं कि टी.वी. आलेख का विशुद्ध स्वरूप विकसित नहीं हो पाया । रेडियो एवं पत्रकारिता की भाषा ने इसकी भाषा की मूल प्रवृति को प्रभावित कर दिया । ऐसी ही स्थिति कैमरे की व्याकरण को लेकर है । फिल्मों के कैमरे की शब्दावली को टी.वी. कैमरे पर ज्यों का त्यों लाद दिया जैसे लागं शाट, मिड क्लोजअप या एक्सट्रीम लागं शाट । आलेख में भी पटकथा या टेलीविजन जैसे शब्दों को अनावश्यक रूप से इसकी तकनीक से जोड़ा गया जबकि टेलीविजन विधा में इसकी जरूरत नहीं है । धारावाहिकों के लिए नाटकों के आलेख की प्रकृति इस विधा के लिये ज्यादा माकूल है?

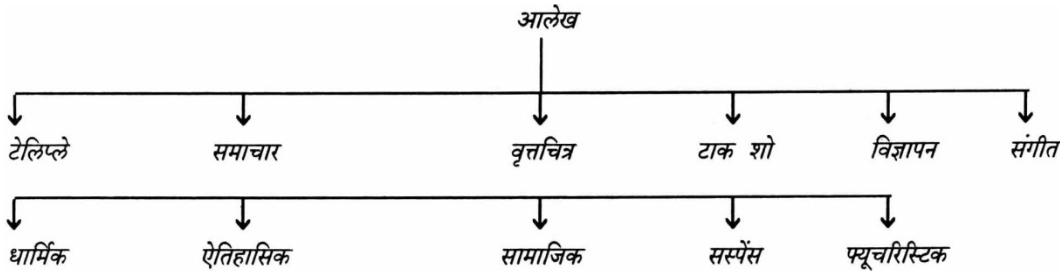

पाश्चात्य संगीत के एलबम की तकनीक ने मौलिक रूप से आलेख की जरूरत को स्थापित किया इसके अतिरिक्त फ्यूचरिस्टिक प्रधान धारावाहिक जिनमें कम्प्यूटर ग्राफिक्स एक डिजीटल प्रभावों की प्रधानता रहती है आलेख की तकनीक को नए रूप में प्रस्तुत करने की संभावना के द्वारा खोले । साथ ही विज्ञापनों की दुनिया में क्रान्तिकारी परिवर्तन ने टेलीविजन को विश्व के बहु त बड़े आर्थिक संसार से जोड़ दिया । कई धारावाहिकों ने इस स्थिति में भी लेखक की भूमिका को निर्देशक की हैसियत से ज्यादा महत्वपूर्ण माना है । आमतौर पर निर्माता ही निर्देशक के रूप में दिखलाई पड़ते हैं फिर भी आलेख की किसी भी कार्यक्रम में चाहे समाचार हो या डाक्यूमेन्ट्री जरूरत होती है । आलेख के बिना किसी टेलीविजन के कार्यक्रम की कल्पना नहीं की जा सकती ।

25.13 निबंधात्मक प्रश्न

1. 'टेलीविजन आलेख किसी भी टेलीविजन कार्यक्रम की आधार शिला है' । इस कथन की समीक्षा कीजिए ।
2. टेलीविजन आलेख (स्क्रिप्ट) लिखते समय किन-किन बातों का ध्यान रखना जरूरी है?
3. टेलीविजन आलेख के विभिन्न प्रकारों की विवेचना कीजिए ।

4. 'टाक शो' से आप क्या समझते हैं? 'टाक शो' का आलेख लिखते समय किन बिन्दुओं का ध्यान रखना जरूरी है? विस्तार से समझाइए ।
5. फ्यूचरिस्टिक धारावाहिक किसे कहते हैं? किसी एक धारावाहिक का उल्लेख करते हुए अपने विचार प्रकट कीजिए ।
6. भारत में 'सोप-आपेरा' का श्रीगणेश किस धारावाहिक से माना जाता है? इस धारावाहिक के बारे में विस्तार से जानकारी दीजिए ।
7. दूरदर्शन के धार्मिक सीरियलों में से कौन सा सीरियल आपको अच्छा लगा? समीक्षा कीजिए ।
8. संक्षिप्त टिप्पणिया लिखिए
   1. थ्रिलर
   2. सिरकॉम
   3. टी.वी. न्यूज
   4. वृत्त चित्र
   5. आलेख की भाषा

इकाई 26 टेलीविजन धारावाहिक लेखन

26.0 उद्देश्य

26.1 प्रस्तावना

26.2 टेलीविजन धारावाहिक : सामाजिक उपयोगिता

26.3 टी.वी. धारावाहिक क्षेत्र में विस्तार

26.4 टी.वी. धारावाहिक के मौलिक तत्व

26.4.1 आइडिया/विचार

26.4.2 विषयवस्तु

26.4.3 कांसेप्ट नोट

26.4.4 कथासार

26.4.5 स्थान एवं चरित्र

26.4.6 ट्रीटमेंट

26.5 टी.वी. आलेख एवं स्क्रीन प्ले में अंतर

26.6 ज्ञानदीप का आलेख

26.7 सारांश

26.8 निबंधात्मक प्रश्न

26.0 उद्देश्य

एक अच्छे टेलीविजन धारावाहिक आलेख के लिए सबसे महत्वपूर्ण तत्व कौन-कौन से हैं इसकी जानकारी के बिना सफल कार्यक्रम का निर्माण नहीं हो सकता । क्योंकि दृश्य माध्यमों में संतुलित शब्दों की भूमिका काफी महत्वपूर्ण है । कैमरे की भाषा तो देश, भाषा की सीमाओं से काफी ऊपर होती है । किन्तु शब्द जुड़ने से एक ओर उस की क्षेत्रीयता निश्चित हो जाती है तो दूसरी ओर कैमरे द्वारा छोड़े गए रिक्त स्थान को भरने से उसकी अभिव्यक्ति की क्षमता बढ़ जाती है । यह बड़ा ही नाजुक एवं संवेदनशील मामला है । टेलीविजन की यह विशेषता अन्य माध्यमों से अलग करती है । फिल्म में भी ऐसा ही रिश्ता है किन्तु संतुलित करने के लिए काफी समय लग जाता है । जबकि टेलीविजन में इस संवेदनशील संतुलन की तत्काल जरूरत हो जाती है ।

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप निम्न बिन्दुओं से अच्छी तरह परिचित हो सकेंगे-

- टेलीविजन धारावाहिक की परिभाषा, स्वरूप एवं उसका सामाजिक महत्व ।
- टेलीविजन धारावाहिक का क्षेत्र एवं विस्तार ।
- टी.वी. धारावाहिक लेखन के मूल तत्व ।
- आइडिया/विचार, विषय वस्तु, कांसेप्ट नोट, कथासार, स्थान एवं चरित्र, ट्रीटमेंट ।
- टी.वी. आलेख एवं स्क्रीन प्ले में अंतर ।

- इसके अतिरिक्त आप टेलीविजन धारावाहिक लेखन के मूल तत्वों को समझकर टेलीविजन के लिए एक धारावाहिक लिख सकेंगे ।

26.1 प्रस्तावना

आज सामाजिक जीवन की विडम्बना यह है कि जहां लोगो के पास बैठ कर ही दो कौर अन्न खाने की फुर्सत नहीं है । सडकों पर लोग अफरा-तफरी में एक हाथ में फास्ट-फूड लेकर खाते हुए दौड़े चले जा रहे हैं और गलाघोटू संस्कृति का एक हिस्सा बन गए हैं । वहां यदि बैठकर नियमानुसार भोजन करने की व्यवस्था की जाएं तो शायद उनके लिए अटपटा लगेगा जो भोजन करने की पारम्परिक संस्कृति को जानना नहीं चाहते और जानकर भी उसका अनुसरण करने की इच्छा नहीं रखते । भले ही यथार्थ रूप में ऐसा संभव नहीं हो लेकिन भोजन करने की शैली एवं उसका सांस्कृतिक स्वरूप तो तब भी रेखांकित किया जाएगा । ठीक इसी प्रकार की स्थिति टेलीविजन माध्यम के क्षेत्र की है । नित नए उपग्रह चैनलों के घमासान में नियमानुसार आलेख तैयार करने की फुर्सत कितने चैनलों के पास है? कहना कठिन है किन्तु फास्ट फूड की तरह फास्ट आलेख तैयार करने की जरूरत से इनकार नहीं किया जा सकता । गरज यह कि व्यक्ति बिना खाए रह नहीं सकता चाहे वह फास्ट फूड ही क्यों न हो? उसी प्रकार चाहे आकाशीय टी.वी. चैनलों का प्रभाव या दबाव कितनी हो, आलेख में उन तत्वों का निरूपण नियमानुसार इसकी प्रकृति के अनुरूप न हो, किन्तु आलेख की जरूरत है ही । खासकर जब एक से बढ़कर एक धारावाहिकों की झड़ी लगी हो ।

26.2 टी.वी. धारावाहिक की सामाजिक उपयोगिता

इसमें दो राय नहीं है कि टेलीविजन के माध्यम का उपयोग मुख्य रूप से सूचना एवं मनोरंजन के लिए बेहतर ढंग से किया जा सकता है । धारावाहिक इस संदर्भ में उल्लेखनीय काम कर सकते हैं । क्योंकि इससे मनोरंजन तो होता ही है यदि और उपयोगी बनाया जाएं तो टी.वी. धारावाहिक अप्रत्यक्ष रूप से सामाजिक हितों के संदेश के प्रसारण का आलम्बन भी बन सकते हैं। धारावाहिकों का इस दिशा में महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है । चूंकि आज अफरा-तफरी का माहौल है इसलिए कमजोर आलेखों के कारण सभी धारावाहिक दर्शकों को आकर्षित करने में असफल रहे हैं ।

एकाधिकार के जमाने में दूरदर्शन के द्वारा प्रसारित किया जाने वाला ऐतिहासिक पहला धारावाहिक आज भी कई लोगों को याद होगा लेकिन इसके बाद जितने भी धारावाहिक प्रसारित होते रहे उन्हें या तो दर्शकों ने नहीं देखा या आकर्षित कर नहीं पाए । कुछ सोप शैली के धारावाहिक 'शांति' या 'स्वाभिमान' भी प्रसारित किए गए किन्तु वे इसलिए अप्रभावी रहे कि उनकी कथावस्तु मूल रूप से आयातित थी । समाज के जिस वर्ग का यह धारावाहिक प्रतिनिधित्व कर रहा था वैसा 'द बोल्ड एन्ड द ब्यूटीफुल' वर्ग भारतीय समाज में नहीं है । इसलिए शुरुआती एपिसोड ने तो अपने खुलेपन के कारण भारतीय महिलाओं के एक वर्ग को प्रभावित तो किया किन्तु अतिनाटकीय बोल्डनेस की वजह से इस की चूलें हिल गई । वैसे भी

भारतीय समाज अभी मानसिक रूप से तैयार नहीं हुआ है कि 'सान्ता बारबरा' की तर्ज पर कोई धारावाहिक 10-15 वर्षों तक देखता रहे ।

26.3 टी.वी. धारावाहिक का क्षेत्र विस्तार

विश्व के लगभग सभी देशों के टेलीविजन प्रसारणों में धारावाहिक ही एक ऐसी विधा है जिसके दर्शकों की संख्या घटती नहीं है । धारावाहिक का चाहे जो भी विषय हो किन्तु कमोवेश सभी धारावाहिकों के दर्शक मिलते रहते हैं । आज भी कुछ चैनलों द्वारा भूत-प्रेत की कहानियों और इससे जुड़े अंध विश्वासों को संरक्षण देने वाले धारावाहिक बनाए जा रहे हैं और ऐसे कार्यक्रमों के निर्माण में प्रतियोगिताएं भी बड़ी हैं । फिर भी इनके दर्शकों की संख्या में कमी नहीं आती दिखलाई देती । यदि तकनीकी एवं कलात्मक रूप से इसकी प्रस्तुति भव्य है तो न सिर्फ इस के दर्शक मिलते हैं बल्कि ऐसे धारावाहिकों से निर्माता अपनी लागत और मुनाफा विज्ञापनों से बटोर लेते हैं । इसीलिए आज की प्रतियोगितात्मक दौड़ में सवाल यह नहीं है कि क्या बिक रहा है बल्कि महत्वपूर्ण यह है कि क्या और कैसे बेचा जा रहा है । उपग्रह द्वारा प्रसारण की सुविधाओं ने इसे और ज्यादा लोगों तक पहुँचाने की सुविधा तो प्रदान की ही है । इस संदर्भ में यह सही है कि टेलीविजन जैसे माध्यमों की तकनीक के मद्देनजर नए-नए विषयों पर नए ढंग से आलेख तैयार होने चाहिए ।

दूरदर्शन ने धारावाहिकों के शुरुआती दौर में देश के लगभग सभी चोटी के साहित्यकारों, लेखकों की कृतियों पर आधारित धारावाहिकों का प्रसारण किया था किन्तु, 'मैला आंचल' या 'श्रीकांत', 'भारत एक खोज' को उतना बड़ा दर्शक नहीं मिला जितना 'तारा' को मिला था । क्योंकि साहित्यिक या कलात्मक कृतियां उस धरोहर की तरह हैं जिसके स्पर्श करने से उंगलियों के दाग लगने का अंदेशा बना रहता है । इसलिये इन्हें छोड़ने या इनकी प्रस्तुति के लिए स्वरूप बदलने के बजाएं इन्हें उसी रूप में ग्रहण किया जाना उचित होगा । उदाहरण के लिये कुछ कलाकारों ने कहानियों का मंचन करने की शुरुआत की है और उनका मानना है कि उससे कहानियों को ढेर सारे लोगों तक पहुँचाने की कोशिश की जाती है । जबकि यथार्थ रूप देखने पर सच्चाई यह है कि मंच पर पहुँचने या प्रस्तुत किए जाने पर उस का स्वरूप बदल चुका होता है । भले ही नाम 'कहानी' लेखक का लगा रहता है किन्तु मंच पर प्रस्तुत होते ही असल में लेखक का नाम भी बदल जाता है । कहानियों का कहानीपन तभी तक मौलिक है जब तक उसे उसी प्रकाशित रूप में पढ़ा जाएं । थोड़ी फेर बदल उसकी स्वाभाविकता से मेल नहीं खाती । इसलिए धारावाहिकों के लेखन के संबंध में यदि मौलिक आलेख टी.वी. तकनीक की दृष्टि से लिए जाएं तो उस की गुणवत्ता बनी रहती है और दर्शक प्रभावित होते हैं ।

26.4 टी.वी. धारावाहिक के मौलिक तत्व

जहाँ तक टेलीविजन धारावाहिक लेखन के मौलिक तत्वों को ध्यान में रखने की बात है बहुत संभव है कि व्यावसायिक जीवन में ऐसा करना संभव नहीं हो । क्योंकि तत्काल जरूरत की संस्कृति ने जीवन के हर स्तर पर मूल्यों को प्रभावित किया है । इसका असर धारावाहिक लेखन की गुणवत्ता पर भी पड़ा है लेकिन बावजूद इसके कई जरूरी तत्व ऐसे हैं कि जिनके

समावेश करने के बिना धारावाहिक स्वरूप नहीं बन सकता जो किसी भी धारावाहिक के आवश्यक तत्वों में से एक है ।

26.4.1 आइडिया/विचार

इस संदर्भ में सबसे पहला तत्व है कि आइडिया या विचार । सर्वप्रथम किसी भी निर्माता या निर्देशक के मन में धारावाहिक बनाने का विचार पैदा होता है और इसके बाद वह विषय की तलाश करने लगता है । प्रोफेशनल धारावाहिक निर्माता विषय की तलाश में अनेक टी.वी. चैनलों द्वारा प्रसारित धारावाहिकों के दर्शकों की संख्या भी ध्यान में रखते हुए सर्वेक्षण के दौरान प्राप्त आकड़ों पर भरोसा करते हैं । दृश्य माध्यमों में विषय वस्तु की तलाश में जोखिम नहीं उठाने की परम्परा फिल्मों से मिलती है । यदि फिल्म की फार्मूलेबाजी को ध्यान में रखें तो पिछले 20 वर्षों से स्मगलर, पुलिस, राजनीति और एक ईमानदार पुलिस के गिर्द कहानियां घूमती हुई नजर आती हैं । फर्क इतना होता है कि खोया हुआ भाई मिल जाता है ।

टेलीविजन या फिल्म के लिए आपने अगर कुछ लिखा है तो उसका कोई मूल विचार होना चाहिए । जब आप निर्माता से मिलते हैं तो उसे आपका आइडिया या विचार एक मिनट में बताना होता है । क्योंकि निर्माता के पास इतना समय नहीं होता कि वह हर लेखक की पूरी कहानी सुने । इसलिये आप उसे आइडिया बताते हैं और उसे वह आइडिया पसंद आता है तो वह आपकी कहानी सुनने में दिलचस्पी दिखलाएगा अन्यथा यह कह देगा कि आपका यह आइडिया मेरे किसी काम का नहीं है ।

बतौर लेखक आप इस बात का ध्यान रखें कि आपके आइडिया में थोड़ा नयापन हो और बाजार की शर्तों के मुताबिक भी हो । अब सवाल यह उठता है कि विचार कहां से मिलें? तो सहाब विचार तो आपके आसपास ही होते हैं । आप जो पढ़ते हैं, जो देखते हैं, जो सुनते हैं आपकी कहानियां उसी से पैदा होती हैं । अशोक चक्रधर ने 'आइडिया विचार' पर लिखा है- 'पटकथाकार का जमीन से जुड़ा होना और उसका व्यापक अनुभव ज्ञान से संपन्न होना जरूरी है। जो व्यक्ति जितने ही लोगों से मिला होगा और जीवन में सामाजिक संबंधों का जितना गहरा अनुभव उसे होगा और उन अनुभवों का सूक्ष्म विश्लेषण वह कर सकता होगा उतना ही बड़ा पटकथाकार वह बन सकता है ' ।

26.4.2 विषय वस्तु

वैसे ही जब से तारा, शांति, खानदान और सास जैसे धारावाहिकों ने रखैल प्रथा की वकालत की है । आज दूरदर्शन या निजी चैनलों द्वारा प्रसारित धारावाहिकों की कथा वस्तु एक जैसी ही नजर आती है । इसलिए यथार्थवादी या भारतीय समाज की वास्तविक समस्याओं से जुड़े धारावाहिकों का एकदम अकाल सा दिखलाई पड़ता है । यदि आइडिया या विचार के बाद विषय की दृष्टि से देखें तो 80 प्रतिशत धारावाहिकों के विषय स्त्री-पुरुष के अवैध संबंधों को सामाजिक स्वीकृति दिखाने के क्रम में नए मूल्यों की स्थापना का है ।

धारावाहिक निर्माता इस तथ्य से परिचित हो गए हैं कि वर्जित मूल्यों के प्रदर्शन से दर्शकों की दिलचस्पी ज्यादा ही बढ़ जाती है । इसलिये वे अपने धारावाहिकों में ऐसे गंभीर

विषय को नहीं लाते । इनके साथ-साथ हास्य धारावाहिकों को देखें तो वहां भी समाज के आपसी रिश्तों के मधुर संबंधों के बावजूद फूहड़ मजाक किया जाता है जिसमें सास-बहु, ससुर-दामाद या पति-पत्नी जैसे रिश्ते होते हैं । हास्य धारावाहिक में भी पति पत्नी के विवाहेत्तर संबंधों को विषय बनाकर प्रस्तुत किया जाता है ।

26.4.3 कांसेप्ट नोट

विचार और विषय तय कर लेने के बाद लेखक एक छोटी सी कथा का स्वरूप देकर उसकी संभावनाओं पर विचार करता है जिसे 'कांसेप्ट नोट' भी कह सकते हैं । यह धारावाहिक की संभावनाओं की एक कुंजी की तरह होता है या यह कहा जाएं कि इस छोटे से नोट में 13 से लेकर 504 कड़ियों की लम्बी श्रृंखला का मंच होता है तो अत्युक्ति नहीं होगी । आज की भाग दौड़ में मूल मंत्र सुनने के अलावा इसकी व्याख्या सुनने की जरूरत नहीं है । इस मंत्र नुमा नोट से लेखक के मस्तिष्क मे धारावाहिक की स्पष्ट रूपरेखा का परिचय भी मिल जाता है । जैसे पूरे हांडी के चावल के उबलने का अंदाजा दो चार दानों को देखकर हो जाता है वैसे ही लेखक का एक मिनट की कहानी या वन लाईन स्टोरी बड़ी काम आती है ।

'कान्सेप्ट नोट' की व्याख्या करते हुए असगर वजाहत ने लिखा है- 'जिसमें आपने अपने विचार लिखे, उसके साथ ही उस विचार की पृष्ठभूमि, उसकी मौलिकता, किस प्रकार के दर्शक वर्ग को आकर्षित करेगा वह विचार, उसमें मनोरंजन के तत्व क्या-क्या हैं, इसको इंडस्ट्री की भाषा में 'कान्सेप्ट नोट' कहते हैं । जब किसी चैनल को निर्माता अपना धारावाहिक बेचने जाता है जो वहां चैनल के अधिकारी उसी 'कॉन्सेप्ट नोट' को पढ़कर धारावाहिक के बारे में पहली राय बनाते हैं । इसलिए इस 'कान्सेप्ट नोट' की बड़ी महिमा है और इस इंडस्ट्री में कई लोग ऐसे होते हैं जिनकी ख्याति बहुत बढ़िया 'कान्सेप्ट नोट' लिखने वाले के रूप में होती है । इसलिए एक लेखक के दिमाग में अपनी कहानी का विचार एकदम स्पष्ट होना चाहिए । अगर आपको ही अपनी कहानी की स्पष्ट समझ नहीं है तो आप दूसरों को कैसे समझा पाएंगे? हालीवुड की फिल्म इंडस्ट्री में तो एक मुहावरा भी चलता है 'वन मिनट स्टोरी' यानी एक मिनट की कहानी। वहां आइडिया या विचार के लिए यह मुहावरा चलता है ' ।

26.4.4 कथासार

इस 'वन लाइन स्टोरी' को जब दूसरे रूप में रूपान्तरित करते हैं तब वह कथासार का रूप ले लेता है । इसमें धारावाहिक बनने वाली कथा का आदि 'मध्य एवं अंत जिसे क्लाईमेक्स कहते हैं' उसका संकेत होता है । इस कथासार में जहां धारावाहिकों के मुख्य पात्रों से परिचय होता है, वहां इस के तकनीक का स्वरूप भी सामने आता है, जो लगभग तीन स्तरों पर विभाजित रूप होता है । इसमें धारावाहिक लेखन के तीन स्वरूप के दर्शन होते हैं । 1. कहानी, 2. आलेख, 3. संवाद ।

पहला स्वरूप कहानी है, दूसरा है आलेख इसे पटकथा भी कहते हैं किन्तु पट शब्द का अर्थ बड़ा परदा है और यह सीधे फिल्म से उठा लिया गया है, जबकि टी.वी. धारावाहिकों का

कैमरा एंगल फिल्म की तरह बहुआयामी नहीं होता है । इसलिए पटकथा का कोई मतलब नहीं रह जाता जबकि आलेख का विस्तार व्यापक है । चाहे तो इसके संवाद कैमरा को एक फ्रेम में फिक्स्ड करके बोले जाएं जबकि पटकथा कैमरे एवं संवाद के बीच तालमेल और उसके आपसी संबंधों के मद्देनजर लिखी जाती है ।

आमतौर पर टी.वी. को पटकथा की जरूरत होती नहीं क्योंकि पटकथा के अनुसार रिकार्डिंग होना असंभव है । कथासार का तीसरा महत्वपूर्ण पक्ष है संवाद । जैसा कहा गया है कि जैसे इसकी पटकथा कैमरे को ध्यान में रखकर नहीं लिखी जाती वैसे ही इसके संवाद भी स्वतंत्र रूप से नाटकीयता के साथ गढ़े जाते हैं । लेखक को कैमरे से ज्यादा उसके श्रवणीय पक्ष पर ज्यादा ध्यान देना पड़ता है । यहां एक दिलचस्प बात यह है कि जितने एपीसोड में धारावाहिकों को बांटा जाता है । उसके उतने ही कहानी आलेख और संवाद के तत्व स्वतंत्र रूप से लिखे जाते हैं । चूंकि टेलीविजन धारावाहिकों का निर्माण फिल्मों की शूटिंग की तरह नहीं किया जाता इसलिए कथा, पटकथा और संवाद अलग-अलग लिखने जैसी स्थितियां उत्पन्न नहीं होती ।

संवाद-लेखन के बारे में यह कहा जाता है कि अच्छा संवाद वह है जो कि वह बताए जो आपके चरित्र में नजर नहीं आ रहा हो । ध्यान रखिए कि आप कोई उपन्यास, कहानी या नाटक नहीं लिख रहे हैं जहांकि अपने पात्र की ज्यादातर जानकारियां आपको अपने संवादों के माध्यम से देनी होती है । इसलिए धारावाहिक की गति को बनाए रखने के लिए छोटे-छोटे संवाद लिखे जाने चाहिए । याद कीजिए 'स्वाभिमान' के पहले ढाई सौ एपिसोड इसलिए बहुत लोकप्रिय हुए क्योंकि उनकी गति बहुत तेज थी ।

हिन्दी के प्रसिद्ध उपन्यासकार अमृतलाल नागर का मत है कि भाषा पढ़कर नहीं सुनकर आती है । इसलिए जब कभी आप लोगों को बातचीत करते देखें तो उनकी भाषा को ध्यान से सुनिए । जितना आप लोगों को सुनेंगे, अलग- अलग वर्ग के लोगों को सुनेंगे आपके संवादों की भाषा उतनी अच्छी होगी ।

संवाद में अपने कुछ प्रमुख पात्रों को पहचान देने के लिए 'तकिया कलाम' का इस्तेमाल करना चाहिए । फिल्मों में नायक-नायिकाओं विशेषकर खलनायकों को विशिष्टता प्रदान करने हेतु इसका प्रयोग होता है । उदाहरणत: फिल्म 'मिस्टर इंडिया' में खलनायक बात-बात में कहता है 'मोगंबो खुश हुआ' या 'क्रांति' में प्रेम चोपड़ा कहता है 'शंभू का दिमाग दोधारी तलवार है ।' वह कोई जुमला भी हो सकता है या कोई आदत भी हो सकती है । (टेलीविजन लेखन, पृष्ठ 50)

26.4.5 स्थान एवं चरित्र

धारावाहिकों का स्थान, चरित्र और कैमरों का मूवमेंट निश्चित होता है । इसलिए आप देखेंगे कि फिल्म की शूटिंग में जितना खर्च और अन्य औपचारिकताओं के संपन्न होने में जितना समय लगता है उससे कही कम समय में एक धारावाहिक जो घंटों में समाप्त होता है, रिकार्ड हो जाता है । दूसरे शब्दों में यह कहे कि एक धारावाहिक की (भारतीय मानदंडों के हिसाब से बनने वाले) रिकार्डिंग पूरे एक दिन में 2- 3 एपिसोड, जिसका आउटपुट एक घंटे से

डेढ घंटे का होता है आसानी से निकल आता है जबकि मात्र दो सवा दो घंटे की फिल्म शूटिंग में लगभग पूरे 365 दिन तो लग ही जाते हैं । गरज यह कि यदि फिल्म शूटिंग के हिसाब धारावाहिकों को रिकार्डिंग में कथा, पटकथा एवं संवाद की बारीकियों पर ध्यान दिया जाएं तो पूरे दिन भर में शायद ही एकाध एपिसोड की रिकार्डिंग संभव हो सके ।

अतएवं निवेदन यह है कि यदि फिल्म शब्दावलियों को हूबहू टी.वी. के खांचे में फिट करना चाहे तो असुविधा हो सकती है क्योंकि दोनों की तकनीकी एवं कलात्मक पद्धतियां एक दूसरे से भिन्न हैं । इसलिए फिल्म की दृष्टि से कथासार के तीन अंग तो हो सकते हैं । (कथा, पटकथा और संवाद) किन्तु टी.वी. में यह लागू नहीं हो सकता । इस विधा में पटकथा गौण हो जाता है । केवल कथानक और संवाद, नाटकों की तरह बचे रह जाते हैं । मूल रूप से धारावाहिकों के स्वरूप का अवलोकन करें तो उनका आलेख नाटकीय तत्वों से भरपूर होता है और यह टेलीविजन माध्यम से नजदीक भी दिखलाई देता है । इसीलिए व्यावहारिक दृष्टिकोण से फिल्म की पटकथा को टेलीविजन के आलेख से मिलाने की कोशिश न करें तो उचित होगा । इस का आलेख रंगमंचीय तत्वों से मिलता जुलता प्रभाव लिए होता है ।

मनोहर श्याम जोशी का मत है कि 'चरित्र चित्रण के लिए हमें कहानी के अनुसार सभी प्रमुख एवं छोटे पात्रों का 'बायोडाटा' तैयार कर लेना चाहिए । 'बायोडाटा' में अपने पात्रों के बारे में एक-एक छोटी जानकारी लिख लें । इसके अतिरिक्त लेखक को अपनी कहानी में कोई ऐसा प्वाइंट जरूर रखना चाहिए, जिसके इर्द-गिर्द उसके पात्रों की इच्छाएं टकराए ।

कहानी में नायक जितना सशक्त हो, आपका खलनायक भी उतना ही सशक्त होना चाहिए । आपके चरित्र में कुछ ऐसी इच्छाएं भी होनी चाहिए जिनसे वशीभूत होकर वह कार्य करे। इसी तरह कई तरह के पात्र या चरित्र होने चाहिए । ठीक उसी तरह जैसे एक परिवार में कई तरह के लोग होते हैं । इस तरह आपके पात्रों का कुछ प्रोफेशन भी होना चाहिए । प्रोफेशन में भी इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वह प्रोफेशन ऐसा हो जिसमें सार्वजनिक जीवन की घटनाएं कुछ आ सकती हैं । आमतौर पर टेलीविजन या फिल्मों के कुछ टाइप प्रोफेशन होते हैं, जिनका ध्यान रखना चाहिए । जैसे वकील, उद्योगपति, नेता, पुलिस अफसर आदि । चरित्र, निर्माण के लिए पटकथा लेखक को अपने आस-पास चरित्रों की तलाश करनी चाहिए जिनका कि वह इस्तेमाल कर सके । इसके अलावा क्लासिको का अध्ययन करना चाहिए और फिल्में देखनी चाहिए हालीवुड-बालीवुड दोनों की ।

26.4.6 ट्रीटमेंट

जहां तक टेलीविजन आलेख में ट्रीटमेंट का प्रश्न है, वहां भी थोड़ी कंजूसी दिखलानी पड़ सकती है । ट्रीटमेंट का मतलब है दृश्यानुसार कथा । किन्तु आप देखेंगे कि धारावाहिक चाहे किसी भी देश का या किसी भी भाषा का हो, दृश्य नहीं बदलते । पात्रों का आना जाना बदलता रहता है । 'यस प्राइम मिनिस्टर' या 'हियर इज लूसी' या भारतीय धारावाहिक को ले लें आम तौर पर कैमरा कलाकारों एवं उनके संवाद अदायगी पर टिका रहता है । अनावश्यक रूप से मूवमेंट नहीं करता । धारावाहिकों की रिकार्डिंग इधर किसी विषय को लेकर डाक्यूमेन्ट्री या अन्य

दूसरे कार्यक्रमों के लिए संभव है कि आप को ट्रीटमेंट लिखने की जरूरत पड़े किन्तु धारावाहिकों में तो कलाकारों के मूवमेंट इतने नाटकीय एवं स्वत : स्फूर्त होते हैं कि ट्रीटमेंट एक फैशनेबल शब्द जैसा लगता है । विज्ञापन जैसे कार्यक्रमों के निर्माण में भी ट्रीटमेंट लिखने की जरूरत हो सकती है किन्तु इसे हर क्षेत्र में लागू नहीं किया जा सकता ।

तो फिर टेलीविजन के इस सिद्धान्त को ही खारिज करना पड़ सकता है कि टी.वी. क्लोजअप का माध्यम है । जब क्लोजअप में ही सब्जेक्ट को दिखाना है तो फिर मंच-सज्जा रख इसके अनेक तामझाम की जरूरत ही नहीं रह जाती है । इस दृष्टि से मानना पड़ता है कि जिन कार्यक्रमों में सेट की भव्यता पर खर्च किया जाता है वे फिल्म के व्याकरण एवं चमक-दमक से ज्यादा प्रभावित है । छोटे परदे पर चमक-दमक वाले चौंधियाते सेट के पार्श्वभूमि में होने के कारण अभिनेता वैसे भी प्रभावशाली नहीं दिखलाई पड़ते शायद इसलिए भी टी.वी. एक ऐसा माध्यम है जिस का उपयोग किसी भी तात्कालिक धटनाओं के लिए किया जा सकता है क्योंकि यह फिल्म निर्माण की औपचारिकताओं से बिलकुल भिन्न है और 'इसे फिल्म की पार्श्वभूमि से हटकर स्वतंत्र रूप से देखने की कोशिश की जानी चाहिए ।

फिल्म या टेलीविजन जैसे दृश्य माध्यमों के लिए आइडिया, विचार के अनुरूप लिखी गई कहानी महत्वपूर्ण नहीं मानी इकाई 26 जाती है क्योंकि हर कहानी एक जैसी होती है । दृश्य माध्यम के लिए महत्वपूर्ण होता है । ट्रीटमेंट यानि दृश्यानुसार कथा, इसे हालीवुड की भाषा में 'स्टेप बाई स्टेप ट्रीटमेंट' भी कहा जाता है । इसमें कहानी उस तरह लिखी जाती है, जिस तरह उसे दिखाया जाना होता है । निर्देशक उसी ट्रीटमेंट के आधार पर फिल्म के दृश्यों की कल्पना करता है ।

ट्रीटमेंट में एक प्रकार से पात्रों, कहानी की घटनाओं, उसके संवादों सबकी झलक देनी पड़ती है । ट्रीटमेंट से ही निर्माता-निर्देशक यह समझ लेते हैं कि आपकी कहानी में कितना दम है और आपके लेखक के रूप में उसकी पहचान भी होती है । इसलिए ट्रीटमेंट नोट का दमदार होना आवश्यक है । इसी में आपके पात्रों को शरीर मिलता है । आमतौर पर 10- 15 पेजों का ट्रीटमेंट नोट आदर्श माना जाता है ।

ट्रीटमेंट नोट के साथ एपिसोड के आधार पर कहानी का विभाजन भी ट्रीटमेंट का एक महत्वपूर्ण हिस्सा होता है । इसे हालीवुड की भाषा में 'वन लाईनर' कहा जाता है । 'वन लाईनर' यानि एक पंक्ति में दृश्य की कहानी कहना । 'वन लाईनर' तैयार करने के बाद संपूर्ण पटकथा लिखने में सुविधा होती है । इस 'वन लाईनर' में इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि हर एपिसोड में एक समान नाटकीयता हो । इस प्रकार के नाटकीय धारावाहिक टेलीविजन के लिए सबसे बिकाऊ माने जाते हैं । (धारावाहिक लेखन के मूल तत्व, पृष्ठ 45)

26.5 टी.वी. आलेख एवं स्क्रीन प्ले में अंतर

धारावाहिकों के निर्माण को भी फिल्मी चश्मे से उतारकर देखने की जरूरत है । इसके बाद यदि इस के आलेख की रचना की जाएं तो संभव है कि इसमें और भी सहजता दिखलाई पड़े । हम लोग, बुनियाद, रामायण, महाभारत जैसे धारावाहिकों के लेखन में फिल्मी प्रभाव

स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है क्योंकि इस के निर्देशकों की दृष्टि 70 एम.एम. के प्रोजेक्टर के विस्तार की रही थी ।

फिल्म की पटकथा का एक उदाहरण प्रस्तुत है ।

1. **किसी घर का अंदर का भाग :-** मोहन का कमरा । दिन । जनरल शाट । मोहन अपने कमरे की बालकनी से नीचे देख रहा है । श्यामा आती है । मोहन उसके आने का पदचाप सुनता है । वह मुड़कर देखता है । श्यामा देखती है । उसके चेहरे पर मुस्कराहट है । उसे मुस्कराहट देखकर आश्चर्य होता है । वह दो कदम आगे चल कर आती है और मोहन के करीब हो जाती है ।

मोहन :- ऐसे क्यों देख रही हो? मुझ पर विश्वास है या नहीं?

श्यामा :- जी हां सर । (वह धीमी आवाज में कहती है) । मोहन उस की हालत को देखकर उस की पीठ थपथपाता हुए कहता है ।

मोहन :- कोई बात नहीं, तुम मुझ पर विश्वास करो ।

श्यामा :- जी सर...असल में मैंने जानबूझ कर..........। मोहन सर हिलाता है । उसे समर्थन देने की कोशिश करता है ।

मोहन :- कोई बात नहीं श्यामा.....कोई बात नहीं कहते हुए चला जाता है । श्यामा बैड़ शीट ठीक करने लगती है ।

अब यदि इस पटकथा के इस दृश्य को फिल्म की तरह टेलीविजन के परदे पर उतारने की कोशिश करे तो इतने संवाद को फिल्माने के लिए कैमरे की पोजिशन बदलनी पड़ सकती है । इसकी प्रकाश व्यवस्था बदलनी पड़ सकती है । किन्तु यदि टी.वी. आलेख इस दृश्य का लिखना हो तो केवल एक शाट में इस दृश्य की रिकार्डिग की जा सकती है ।

दृश्य 1. घर का आन्त्य भाग । मोहन का कमरा । मोहन बालकनी से झांक रहा है । श्यामा आकर खड़ी हो जाती है । कैमरा लॉग शाट से जूम इन होकर टू-शाट पर ठहरता है । मोहन मुडकर देखता है ।

मोहन : ऐसे क्यों देख रही हो? मुझ पर विश्वास नहीं होता?

श्यामा :- जी सर.....

मोहन :- कोई बात नहीं, मुझ पर विश्वास रखो ।

श्यामा :- जी सर, असल में मैंने जानबूझ कर...

मोहन :- मैं समझता हूँ । कह कर चला जाता है । (कैमरा जाते हुए दिखलाता है । श्यामा का रिएक्शन शॉट) इन दोनों उदाहरणों में आप देखेंगे कि दूसरे में फिल्मी पटकथा गायब है और उसकी जगह रंगमंचीय गतिशीलता ने ले ली है ।

यहां पर दो धारावाहिकों का उल्लेख करना उचित प्रतीत होता है । पहले 'खानदान' जिसके प्रत्येक एपीसोड में या तो कैमरा या कलाकार गतिशील रहते हुए संवाद बोलते हैं और पूरा धारावाहिक इस दृष्टि से सबसे अलग दिखलाई देता है । इसके अधिकांश शॉट क्लोजअप या बी.सी.यू. में लिए गए हैं । इससे स्पष्ट पता चलता है कि इसमें निर्देशक की कल्पनाशीलता का भी प्रत्येक दृश्य के साथ लगाव है जबकि 'हम पांच' में कलाकार अपनी भूमिका के अनुसार

कैमरे के सामने आते-जाते हैं और कैमरा ज्यादा क्लोजअप के शाट्स में विश्वास नहीं रखकर कलाकारों की अभिनय क्षमता पर निर्भर करता है ।

26.6 ज्ञानदीप का आलेख

इस संदर्भ में लेखक का अपना धारावाहिक 'ज्ञानदीप' 1986-88 में प्रत्येक शुक्रवार को 7.40 पर ठीक चित्रहार से पूर्व प्रसारित हुआ था । इस कार्यक्रम के आलेख का एक दृश्य प्रस्तुत करना प्रासंगिक है, जिसे अपने ही निर्देशन में डी.डी.-1 चैनल से प्रसारित किया गया था । इस कार्यक्रम का उद्देश्य समाज में शैक्षिक व सांस्कृतिक चेतना को जागत करने का प्रयास करना था । इसमें ज्ञानदीप मंडल के सामाजिक कार्यों की सूचना से लेकर इन्टरव्यू एवं छोटे-छोटे नाटकों का प्रदर्शन किया जाता था । संयोग यह था कि 1973 से ही उपग्रह दूरदर्शन के लिए लेखक आलेख लिखता रहा था । तब स्वतंत्र रूप से पत्रकारिता का रहा था । 1973 में पहला नाटक 'पुरुषार्थ' रिकार्ड किया गया था जिसे वर्तमान में कार्यक्रम नियंत्रक श्रीनाथ खंडेलवाल ने प्रस्तुत किया था । 1974 में लेखक नियमित रूप से दूरदर्शन में 'स्क्रिप्ट राइटर' के पद पर कार्य करने लगा था ।

ज्ञानदीप कार्यक्रम के लेखक एवं निर्देशक रूप में प्रस्तुत इस आलेख को देखेंगे तो इसके संवादों की गतिशीलता, स्थान एवं एक साथ कैमरे के सामने कम से कम चरित्रों के अभिनय की विशेषता मिल सकती है । इस आलेख में इस संभावना को ध्यान में रखा गया है कि दूसरे निर्देशक अपनी सुविधा के अनुसार कैमरे की 'पोजीशन को तय करके रिकार्डिंग कर सकते हैं और किसी अच्छे आलेख में इतनी लोच तो होनी ही चाहिए ।

इस आलेख में एक किशोर की मानसिकता से बदलते हुए सामाजिक मूल्यों के प्रति चिन्ता एवं जिज्ञासा प्रकट की गई है जो नहीं चाहता है कि उसकी बहन से कोई दूसरा व्यक्ति बात करे क्योंकि उसने बचपन में सामाजिक वर्जनाओं के तहत जाना कि लड़की और लड़के के बीच संवाद करना उचित नहीं है । किन्तु इस दृश्य में वह अपनी आंखों के सामने यह परिवर्तन देख रहा है ।

एपिसोड- 2

देवन का घर । डाइनिंग टेबल पर बैठा होम वर्क में व्यस्त है । किचन में मम्मी खाना पका रही है । दीदी पास में बैठकर स्वेटर का डिजाइन बना रही है तभी दरवाजे पर घंटी बजती है । (इसे कैमरा एक पैनिंग शाट में कवर कर सकता है)

सुमन : देबू देखना तो कौन है? (दोबारा घंटी बजने पर)

मम्मी : (किचन से) देबू देखना तो कौन है?

देवन : (चिढ़कर) मुझे कोई नहीं देखता कि मैं होमवर्क कर रहा हूँ । (वह उठता है, दरवाजा खोलता है, आवाज देता है, दीदी......)

सुमन : हाय नरेश तुम........अभी आयी.....। (देवन चुपचाप आकर बैठ जाता है किन्तु डिस्टर्ब्ड है । उस युवक का आना अच्छा नहीं लगता । इसलिये उसका ध्यान बँट जाता है ।)

कट

(ड्राइंग रूम में)

सुमन : कैसे आए? घर ढूंढने में तो तकलीफ नहीं हुई?

नरेश : तकलीफ होती भी तो मैं ढूंढ़ निकालता और फिर इतना छोटा कस्बा है कि अगर किसी के घर में छौंक लगे जोरदार तो पूरे कस्बे को पता चल सकता है ।

सुमन : मेरे घर भी छौंक का पता लगा है तुम्हें, मेरी मम्मी इसमें माहिर है....बहुत अच्छा खाना पकाती है .....।

नरेश : मुझे क्या पता? मुझे तो कभी नहीं खिलाया ।

सुमन : झूठ क्यों बोलते हो ? कई बार तो लंच लेकर गई थी ।

नरेश : वह तो ठंडा था..गर्म तो खिलाया ही नहीं.....।

(तभी देवन अंग्रेजी की किताब लेकर आता है)

देवन : दीदी, इसका मतलब जरा समझा देना....।

सुमन : अभी तो तुम मैथ्स बना रहे थे, उसे पूरा कर लो फिर अंग्रेजी बता दूंगी...।

देवान : मैथ्स तो बना लिया.....।

सुमन : अभी थोड़ी देर रुको....मैं बता दूंगी- ठीक?

(देवन उठकर आता है । अपना फुटबाल निकालता है और अकेले ही खेलने लगता है । फुटबाल बार-बार ड्रांगइंगरूम में फेंकता है और लेकर आ जाता है तथा सुमन उठकर आ जाती है ।)- तुम थोड़ी देर के लिए बाहर नहीं खेल सकते इडियट- जाओ बाहर जा कर खेलो ।

नरेश/देवन : (का क्लोज अप फ्रिज शॉट डीजाल्व संजीव)

हालांकि मैं खेलना नहीं चाहता था, किन्तु उस आदमी को जो मेरी बहन से मिलने आया था और हंस-हंस कर बातें कर रहा था, अच्छा नहीं लगा । अनजाने में ही वह मेरा शत्रु हो गया । हालांकि में उसे तंग करने की कोशिश कर रहा था...............या फिर मैं स्वयं हो रहा था............क्यों हो रहा था..................मुझे नहीं मालूम ।

देवन : (जोर से बाल फेंकता है । दीवार से लगकर कांच के शो-पीस तोड़ता हुआ नरेश को लगता है । सुमन गुस्से में आकर उसे पीट देती है ।)

सुमन : इडियट, मैंने तुम्हें बाहर जाकर खेलने को कहा, लेकिन सुनता नहीं....तोड़ दिया न....कितना अच्छा शो-पीस तोड़ दिया न....कितना अच्छा शो-पीस.....डैडी ने मेले में खरीदा था...।

माँ : क्या हुआ? क्या टूट गया?

सुमन : इसने बाल से डैडी का शो-पीस तोड़ दिया..।

माँ : क्या कर दिया देबू....यहां फुटबॉल खेलने की क्या जरूरत थी....।

देवन : मैं खेल नहीं रहा था...माँ मैंने फेंका तो बस दीवार से लगकर उछल गया.., ।

सुमन : नरेश को भी चोट लगी....तूने जानबूझ कर मारा....आने दो डैडी को...जाकर उठा इसे.....।

नरेश/देवन (क्लोजअप फ्रीज) (हालांकि शीशा तोड़ना अच्छा नहीं लगा, किन्तु उठाने के बहाने मुझे इस कमरे में रहने का अवसर मिला)

सुमन : तू चुन क्या रहा है देबू.....जल्दी-जल्दी उठा और जा चाय ले आ (यह सुनकर तमतमाते हुए नरेश की ओर देखता है और चला जाता है । थोड़ी देर में चाय लेकर उपस्थित होता है । वह सोचता है कि इतनी गर्म चाय है कि चाय पीते ही उसके गले में जलन होने लगी है । वह चीखने लगा है और पानी-पानी चिल्लाने लगा है, लेकिन यथार्थ में चाय रखकर देवन चला जाता है । अपने होम वर्क पर चिंतित होकर बैठ जाता है ।)

माँ : देख तो देबू, हलवे में चीनी ठीक है या और डलेगी?

देवन : किसके लिए मां?

माँ : सुमन का सहपाठी है न, उसके लिए....।

देवन : क्यों? उसके लिए हलवा क्यों?

माँ : क्या हुआ बेटा....वह रोज-रोज थोड़े ही आता है?

देवन : मां इतनी अच्छी चीजें खिलाओगी तो रोज-रोज नहीं आने लगेगा?

मां : तू सचमुच भोला है.....अच्छा चख चीनी ठीक है.....

देवन : (अनमने भाव से चखकर) ठीक है । अब चीनी डालने की जरूरत नहीं है ।.....

(मां चली जाती है । वह और चिंतित हो जाता है । ड्राइंग रूम की बातें सुनने की कोशिश में दरवाजे से कान लगा कर सुनता है)

कट

नरेश : तेरा बड़ा भाई नहीं आता?

सुमन : आज छुट्टी है...........इसलिए डैडी के साथ ही कहीं गया हुआ है । छोटे भाई से तो मिल ही चुके ....।

नरेश : हां....परिचय हो गया.........कल क्या करोगी? कल भी तो छुट्टी है....।

सुमन : कल तो मैं लाइब्रेरी में रहूंगी-लाइब्रेरी कल खुली है........।

नरेश : मैं संभव हुआ तो जरूर आऊंगा ।

(तभी मां देवन को)

माँ : वहां खड़ा क्या सुन रहा है तू? जा, यह नाश्ता उन्हें दे आ......(देवन घूरता हुआ प्लेट पकड़ता है और उनके बीच रखकर बाहर चला आता है ।)

कट

(पार्क में वह चुपचाप अकेला बैठा है । चिंतित तभी सुमन खोजती हुई आती है)

सुमन : तू यहां बैठा है....डैडी तेरी तलाश कर रहे हैं ।

देवन : वे पीटेंगे?

सुमन : तूने उनकी प्यारी चीज जो तोड़ दी ।

देवन : मैंने जानबूझ कर नहीं तोड़ा, बॉल से लग कर टूट गयी..........।

सुमन : ठीक है- ठीक है । यह सफाई डैडी को देना.....चल अभी......

(वह सहमता हुआ उठता है)

कट

(घर में प्रवेश करता है । चारों ओर देखता है । डैडी को नहीं पाकर चेहरे पर पट्टी चढ़ाए वीरू का प्रवेश)

देवन : डैडी.....डैडी......।

वीरू : यस इडियट द ग्रेट...............तूने कांच का शो-पीस तोड़ दिया.....? आज तेरी हड्डियां इसी तरह तोड़ी जाएंगी............बहुत दिनों के बाद फंसे बच्चे ।

देवन : डैडी कहां हैं......? (वीरू इधर-उधर ढूंढने का नाटक करता है । फिर जेब देखता है ।)

वीरू : अरे डैडी तो जेब में भी नहीं हैं । लगता है डैडी किचन में हैं । रसगुल्ले खा रहे हैं.....।

देवन : मां....डैडी कहां हैं?

माँ : (किचन से) बाद में आएंगे बेटे.......तेरे लिये हलवा ला रही हूँ......।

वीरू : खा ले.....खा ले हलवा, फिर डैडी को आने दे तब देखना जलवा.....।

सुमन : शटअप वीरू ? तू इतना क्यों डरा रहा है इसे?

वीरू : यह अपने को हीरो समझता है ।

सुमन : समझने दे, तुम्हारा क्या जा रहा है?

(मां हलवा लेकर आती है)

माँ : ले, खा ले.....।

देवन : नहीं, मैं नहीं खाऊँगा....।

वीरू : श्योर.....ला भी मुझे दे दे..........।

माँ : मारूंगी....इसे खाने दे......।

वीरू : यह नहीं खाता मां....हलवा इसे अच्छा नहीं लगता । क्यों देबू? आज तो मार खाएगा मार.....डैडी के हाथों धमा धम धमाधम

(देबू मां के हाथ से हलवा लेकर चला जाता है....दूसरे कमरे में)

(समय का अन्तराल दिखाने के लिए घड़ी की चलती सुई को डिजाल्व करके दिखाया जाता है । वह घड़ी देखता है । डैडी के आने का इंतजार..दरवाजे की घंटी बजती है । देबू सहम जाती है, किन्तु पड़ौस के मेजर शर्मा अपनी बेटी के साथ आते हैं...........देवी झांक कर देखता है)

माँ : आइए मेजर साहब...............कैसे याद आयी पड़ोस की?

मेजर : बस भाभी जीं आज छुट्टी थी, नीता ने कहा देवन के यहां जाऊंगी...श्रीमती जी खाना पकाने में लगी थी, सो मैं नीता को छोड़ने चला आया....।

माँ : आओ बेटी.....देबू अन्दर है अपने कमरे में.....चाय पीते जाइए मेजर साहब....।

मेजर : कहां है श्रीमानजी....?

माँ : अभी उन्हीं के आने का इंतजार हो रहा है । एक जरूरी मीटिंग थी.....सो चले गए.....।

मेजर : ओ.के. । जब मैं नीता को लेने जाऊंगा तो चाय भी पी लूंगा । अभी मैं चलता हूँ ।

माँ : आओ बेटी......।

मेजर : ओके बेटी, मैं घंटे भर बाद में आऊंगा । ठीक....बाय-बाय भाभी.....।

कट

(नीता देवन के कमरे में)

नीता : हाय देवन.....होम वर्क कर लिया मैथ्स का...?

देवन : नहीं.....।

नीता : मुझे बता दो न....कल मैं क्लास में नहीं थी।

देवन : मेरी कापी में है.....देख लो.....(वह कापी दे देता है)

(मां का प्रवेश)

माँ : कुछ खाओगी बेटी.....हलवा अच्छा लगता है?

(तभी उसकी नजर हलवे पर पड़ती है । अरे तूने तो खाया ही नहीं......। खा ले बेटा...डैडी तुम्हें कुछ नहीं कहेंगे....मैं उन्हें मना कर दूंगी....और मैं ले आती हूँ..तुम दोनों खा लो मिलकर....।)

नीता : मैं खा कर आ रही हूँ....।

माँ : हलवा थोड़े न खाया होगा, पगली कहीं की...।

(वह चली जाती है)

नीता : क्या हुआ देबू...तुमने कुछ किया है क्या?

देवन : नहीं तो....बस एक शो-पीस टूट गया है । डैडी ने खरीदा था ।

नीता : क्या तुम्हारे डैडी इसके लिये पीटेंगे?

देवन : नहीं तो.............क्यों पीटेंगे........फिर दूसरा आ जाएगा ।

नीता : फिर डरे हुए क्यों हो?

देवन : कौन मैं....? नहीं तो..मेरे डैडी नहीं पीटते, कभी नहीं.....।

नीता : तो फिर तुमने हलवा खाया क्यों नहीं..?

देवन : वो? मैं सोच रहा था कोई और आ जाएं और तुम आ गयी हो न..मैं अभी खा लेता हूँ....। हलवा अच्छा है (खाकर) तुम भी थोड़ा लो न?

(मां का प्रवेश)

माँ : लो मैं इसके लिए भी ले आयी...लो बेटी....(देकर चली जाती है)

नीता : तुम और ले लो....मेरे लिये काफी है । मैं ज्यादा हलवा नहीं खाती....।

देवन : लाओ.....मुझे तो हलवा बहुत अच्छा लगता है । मां रोज-रोज बनाती है । डैडी को भी बहुत अच्छा लगता है......हम रोज डैडी के साथ हलवा खाते हैं..डैडी हमें...,

नीता : तुम डैडी-डैडी क्यों करने लगे?

देवन : ओ हां.....हलवा अच्छा है । है न? टेस्टी.....तुम्हारे डैडी कब आएंगे?

नीता : घंटे भर बाद....।

देवन : इतनी जल्दी क्यों...? तुम आज यहीं रह जाओ । हम दोनों पढ़ाई करेंगे....मैं तुम्हारे सारे मैथ्स ठीक कर दूंगा ।

नीता : नहीं देबू....मैं ज्यादा नहीं रह सकती । हम लोग आज किसी के यहां खाना खाने जाएंगे, लंच....करने.....।

देवन : तुम शाम को चली जाना......मेरा मतलब है, तुम मेरे यहां लंच कर लो....- और पापा को फोन से बता दो......तुम्हारे साथ मैथ्स करना अच्छा लगेगा ।

नीता : बात तो ठीक है, चलो फोन करके बता देते हैं ।

देवन : हां चलो....आज तुम लंच मेरे साथ करना । मां को बहुत खुशी होगी.....वह बहुत खुश होती है यदि किसी को लंच या डिनर पर बुलाती है......(दोनों फोन के पास पहुँचते हैं । तभी फोन की घंटी बज उठती है । देवन उठाता है......।)

देवन : हैलो....कौन डैडी? ओह हां...आप आधा घंटे में आएंगे....जी...कोई बात नहीं....यस डैडी...आधा घंटे में...(वह परेशान हो जाता है । हैलो-हैलो की आवाज आती रहती है । वह फोन रख देता है)

नीता : तुमने डैडी से बात क्यों नहीं की?

देवन : वे आ रहे हैं न? आधा घंटे में । फिर बात कर लूंगा.....तुम फोन तो करो......।

नीता : (डॉयल करती है, कोई नहीं उठाता) लगता है मम्मी कहीं गयी हुई है,....थोड़ी देर में फिर फोन कर लूंगी । चलो मैथ्स करते हैं ।

देवन : हां तुम चलो.....मैं मां को बोल कर आता हूँ.........।

कट

(किचन में)

देवन : .....मम्मा.....डैडी थोड़ी देर में आएंगे।

माँ : तो क्या हुआ? तू इतना डरा क्यों है? मैं बोल दूंगी....यह शीशा मुझ से टूट गया है....।

देवेन : लेकिन मम्मा....दीदी और भैया?

माँ : तू इसकी चिन्ता मत कर....अभी बुलाती हूँ उन्हें....सबको मना कर दूंगी......सभी कहेंगे कि यह शीशा मैंने तोड़ा है....मुझसे टूट गया है ।

देवेन : लेकिन डैडी तुम पर नाराज होंगे मां......।

माँ : कोई बात नहीं.....एक बार और सही । वे तो मुझ पर नाराज होते ही रहते हैं.....तू चिन्ता मत कर, आने दे.....मैं संभाल लूंगी ।

देवेन : सच मां...तुम कितनी अच्छी हो....।

(स्वगत) उस दिन मुझे लगा था कि माँ को लोग मां क्यों कहते हैं? मुझे उस दिन मां दुनिया की हरेक महान वस्तु से महान आसमान से भी ऊंची लग रही थी....मुझे लगा था कि यदि मां नहीं होती; पता नहीं क्या होता । तभी तुझे प्रिया की बात याद आ गयी थी ।

कट

(नीता के साथ कमरे में मैथ्स करता हुआ)

देवेन : ये दूसरी मां क्या होती है? तुझे मालूम है?

नीता : दूसरी मां? नहीं तो....क्यों?

देवेन : जानती हो प्रिया की दूसरी मां है? मतलब कि उसकी पहली मां कहां गयी....?

नीता : या तो चली गई होगी चौपड़ा आन्टी की तरह या मर गयी होगी......।

देवेन : अरे अब समझ में आया । तभी दूसरी मां से पहली मां अच्छी होती है....यह कितनी अच्छी है की हम दोनों की पहली माँ है...(तभी माँ की आवाज-)

कट

(डाइनिंग टेबल पर दीदी, भैया और मां बैठे हैं)

माँ : देखो बेटा....मैंने इनको समझा दिया है कि वे तुम्हारा नाम नहीं बताएंगे और चुप रहेंगे । यदि डैडी ने इनसे पूछा भी तो.....ठीक है?

वीरू : तुम तो मां बीच में आ गयी वरना आज मैं देखता देबू का तबला कैसे बजाया जाता....ताक धिनाधिन.... तान.....।

माँ : तू चुप रहता है कि नहीं? क्यों डरा रहा है उसे तू?

सुमन : मैं चुप तभी रहूंगी.जब भी मैं तुझे कोई काम कहूँ तू कर देगा.ना नहीं कहेगा? बोलो मंजूर है..? ठीक है....।

वीरू : और मेरा भी....तू रोज मेरी मालिश कर दिया करेगा....।

माँ : तू जा देबू....दुष्ट कहीं का अपने छोटे भाई को सताने में मजा आता है.....?

वीरू : आज तो मजा आएगा...जब पूछेंगे कि वह कीमती शो-पीस कहां गया? कैसे टूटा? मां, मैं अब भी कहता हूँ तू झूठ बोलकर डैडी का गुस्सा अपने ऊपर मत ले....आज पिट जाने दे हीरो को..।

माँ : तुझे मैं मारूंगी.तू जरूर मेरे हाथों पिटेगा.....।

वीरू : चोट तुझे ही लगेगी मेरी मां...

(देबू चला जाता है । तभी घंटी बजती है । मैथ्स करते-करते अचानक उसके मुंह से निकलता है...डैडी आ गए....वह बिजली की गति से उठकर खड़ा होता है और बातें सुनने की कोशिश करता है ।)

कट

(डैडी का एक आदमी के साथ प्रवेश । उसे ड्राइंग रूम में बिठा कर अन्दर आते हैं । किचन के पास मां)

माँ : आ गये आप......? काफी देर से आपका इन्तजार कर रही थी ।

महेंद्र : हां, मीटिंग लम्बी खिंच गयी ।

माँ : चाय पीएंगे......?

महेंद्र : हां चाय बनाओ । लेकिन ड्राइंगरूप में शीशे वाला शो-पीस कहां है?

माँ : मुझे इसी के बारे में आपसे बात करनी है.....।

महेंद्र : क्या हुआ?

माँ : असल में मुझसे भूलवश वह शीशा गिर कर टूट गया ।

महेंद्र : अच्छा तो और टूट गया? अरे भागवान, टूटा तो मुझ से ही था, किन्तु इतना नहीं कि जोड़ा नहीं जा सके । इसे जोड़ने के लिए ही तो इस आदमी को बुलाया था । एक दिन मुझसे ही साफ करते हाथ से फिसल कर गिर गया था ।

माँ : तब तो अच्छा हुआ टूट गया.........टूटे शीशे को घर में रखना भी ठीक नहीं अच्छा किया देबू ने ।

महेंद्र : देबू ने........?

माँ : हां देबू ने ही चुनकर बाहर फेंक दिया ।

महेंद्र : कहां है देबू...देबू...(देबू का प्रवेश)

देबू : जी डैडी.......।

महेंद्र : तुमने फोन क्यों रख दिया.....मैं बताना चाह रहा था कि तुम्हारी टीचर मिली थी, तुम्हारी तारीफ कर रही थीं...आई एम प्राउड आफ यू माई डियर.....। अच्छा हुआ तुमने शीशे को तोड़कर बाहर फेंक दिया वैल डन माई बॉय (देबू के चेहरे पर खुशी,) दरवाजे पर घंटी, मेजर आते हैं ।)

महेंद्र : हैलो मेजर शर्मा.....।

मेजर : अब मैं चाय पी कर जाऊंगा । अभी थोड़ी देर पहले आया तो आप नहीं थे, बिना चाय पिये चला गया ।

कट

देबू : लगता है तुम्हारे पापा आ गए.....।

नीता : मैं बोल कर आती हूँ........।

देवेन : जा भी सकती हो....मैथ्स तो पूरा हो ही गया और मैं कल स्कूल में लेता आऊंगा ।

नीता : कल तो छुट्टी है....

देवन : तो परसों ले लेना.........।

नीता : ठीक है...मैं जा रही हूँ.....।

देवेन : ओके नीता.....बॉय-बॉय.......।

देबू (देबू का क्लोजप का फेस) : मैं अनावश्यक डरा हुआ था । कभी कभी सामने दिखाई देने वाला डर इतनी जल्दी दुम दबाकर भाग जाता है । जैसे वह मुझ से ही डर गया हो । शीशा टूटने के कारण डैडी की डांट का डर वैसे ही निकल गया
जैसे काफी उमस के बाद बारिश हो रही हो ।

दृश्य..देबू बारिश में भीग रहा है...मधुर संगीत.......देबू का उछलता हुआ शॉट फ्रीज टाइटल्स के बाद डिजॉल्व ।

हालांकि सुपर कंम्यूटर एवं डिजिटल संभावनाओं के युग में टेलीविजन माध्यम में अनेक प्रयोग चल रहे हैं । इनमें से एक है रियलिटी टी.वी. । इस प्रयोग में भी कहीं न कहीं एक आलेख की जरूरत होती है । जबकि कलाकारों को वास्तविक अभिनय के लिए स्वतंत्र छोड़ दिया जाता है । किन्तु प्रत्येक एपीसोड को एक दूसरे से जोड़ने के लिए आलेख की जरूरत होती है, जो परम्परागत ढंग से लिखे गए आलेखों से अलग होता है । हालांकि अमेरिका एवं जापानी समाज में रियलटी टी.वी. के प्रसारण का दौर शुरु हो गया है । अभी हाल में ही 'सरवाईवर' शीर्षक से लगभग 16 कड़ियों का एक धारावाहिक का प्रसारण एक उपग्रह चैनल के द्वारा प्रसारित किया गया । इससे पता चलता है कि आलेख लेखन की संभावनाओं के भी नए आयाम देखने को मिल सकते हैं ।

26.7 सारांश

टेलीविजन धारावाहिक आज लोकप्रिय हो रहे हैं । धारावाहिक ऐसी विधा है जिसके दर्शकों की संख्या घटती नहीं है । दूरदर्शन ने प्रारम्भ में सभी साहित्यकारों की कृतियों पर धारावाहिक बनाए थे । धारावाहिक के मौलिक तत्व आइडिया/विचार, विषयवस्तु, कांसेप्ट नोट, कथासार, स्थान एवं चरित्र तथा ट्रीटमेटं है

26.8 निबंधात्मक प्रश्न

1. 'धारावाहिक' से आप क्या समझते हैं? टेलीविजन के लिए धारावाहिक के क्षेत्र एवं विस्तार पर अपने विचार व्यक्त कीजिए ।
2. टेलीविजन धारावाहिक के मूल तत्वों की विवेचना कीजिए ।
3. टी.वी. आलेख एवं स्क्रीन प्ले में अंतर स्पष्ट कीजिए ।
4. 'अच्छा आलेख सहज शब्दों से बनता हैं' । इस कथन की समीक्षा कीजिए ।
5. संक्षिप्त टिप्पणियां लिखिए

   1. कांसेप्ट नोट 2. ट्रीटमेंट 3. आईडिया/विचार 4. कथासार

छात्र टिप्पणी

छात्र टिप्पणी

विश्वविद्यालय द्वारा संचालित पाठ्यक्रमों की सूची

पाठ्यक्रम का नाम		अवधि
1.	स्नातक उपाधि प्रारम्भिक पाठ्यक्रम	6 माह
2.	भोजन एवं पोषण में सर्टिफिकेट	6 माह
3.	कम्प्यूटर ज्ञान एवं प्रशिक्षण का प्रारम्भिक पाठ्यक्रम	6 माह
4.	सर्टिफिकेट इन कम्प्यूटिंग	6 माह
5.	पंचायती राज प्रोजेक्ट में प्रमाण-पत्र	6 माह
6.	संस्कृति एवं पर्यटन में प्रमाण-पत्र	6 माह
7.	महिलाओं में वैद्यानिक बोध में प्रमाण-पत्र	6 माह
8.	राजस्थानी भाषा एवं संस्कृति में प्रमाण-पत्र	6 माह
9.	बी.ए.एफ./बी.सी.एफ. (त्रिवर्षीय पाठ्यक्रम)	1 वर्ष
10.	एम.ए.(अर्थशास्त्र, राजनीति विज्ञान, इतिहास, हिन्दी)	2 वर्ष
11.	एम.बी.ए.	3 वर्ष
12.	पी.जी.डी.एच.आर.एम.	1 वर्ष
13.	पी.जी.डी.एफ.एम.	1 वर्ष
14.	पी.जी.डी.एम.एम.	1 वर्ष
15.	पी.जी.डी.एल.एल.	1 वर्ष
16.	टी.एच.एम.	1 वर्ष
17.	डी.एन.एच.ई.	1 वर्ष
18.	डी.सी.ओ.	1 वर्ष
19.	डी.एल.एस.	1 वर्ष
20.	डी.सी.सी.टी.	18 माह
21.	बी.जे.(एम.सी.)	1 वर्ष
22.	एम.जे.(एम.सी.)	2 वर्ष
23.	बी.लिब.	1 वर्ष
24.	पर्यावरण विज्ञान में स्नातकोत्तर डिप्लोमा	1 वर्ष
25.	बी.एड.	2 वर्ष
26.	पी.एच.डी.	3 वर्ष
27.	पी.जी.डी.ई.एस.डी.	1 वर्ष